वर्ष ३

ओ३म् **भक्ति** ओ३म्

भक्ति कार्यालय

रेवाड़ी

श्रीमान् जी !

सादर जय श्रीकृष्ण की । आपकी सेवामें भक्ति का १२वां अंक आरहा है । इस अंक के पहुंचने पर आपका वार्षिक चन्दा समाप्त हो जाता है । अगला अंक "भगवदंक" होगा । इस अंक पर हमको बहुत कार्य रहेगा । वी. पी. भी बहुत करनी होंगी । प्रायः अधिकतर ग्राहक इसी अंक से होते हैं । अत: आप से सानुरोध प्रार्थना है कि आप अपना वार्षिक चन्दा २) मनिआर्डर से भेजने की कृपा करें । इससे हमारा कार्यभार बहुत हलका हो जावेगा और हम आप लोगों की सेवामें समय पर "भगवदंक" भेज सकेंगे । वी. पी. द्वारा अंक भेजने में विलम्ब होने की बहुत सम्भावना है । जो सज्जन आगामी वर्ष भक्ति के ग्राहक नहीं रहना चाहते वह कृपया कार्यालय को सूचित करदें क्योंकि वी. पी. वापिस आने में कार्यालय को वी. पी. खर्चे की व्यर्थ हानि उठानी पड़ती है और अंक भी खराब हो जाता है रियायती विद्यार्थी ग्राहकों की सेवामें भी निवेदन है कि उनके लिए भी यह रियासत केवल एक वर्ष के ही लिए थी । इस वर्ष उनको भी अपना वार्षिक चन्दा २) ही भेजने होंगे ।

भवदीय

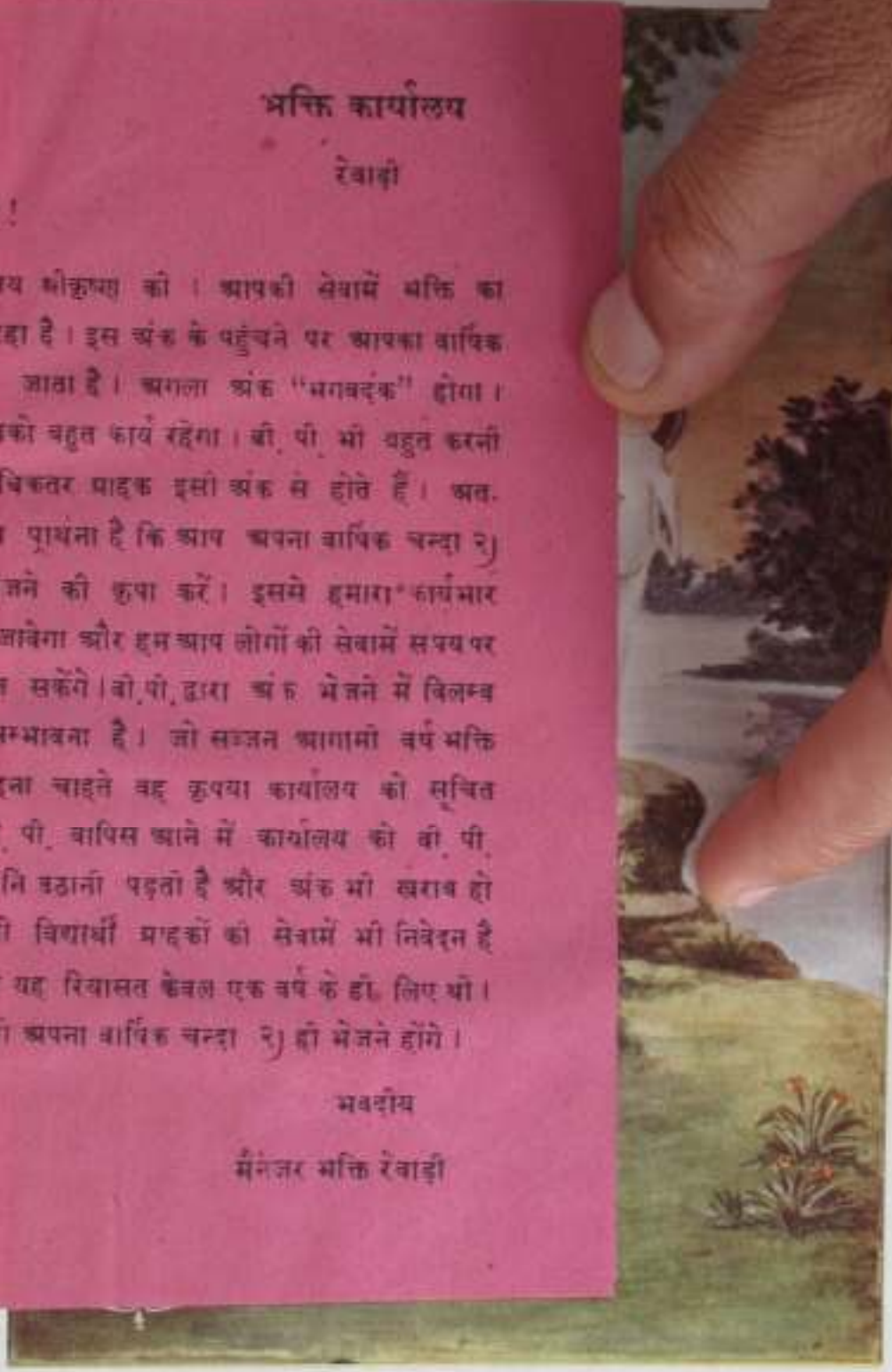

मैनेजर भक्ति रेवाड़ी

वार्षिक चन्दा २)

सम्पादक—
म० कृष्णानन्द, भूमानन्द

एक प्रति का मूल्य ।)

REGD. No. L. 2077

भक्ति प्रेस

१. भगवत्गीता संस्कृ

२. सारसंग्रह

३. शब्दसंग्रह

४. भगवत् गीता द

५. अष्टोत्तरशतमन्त्रमा

६. वेदोपनिषत्

७ ज्ञानधर्मोपदेश

८. भाषा फक्किका प्र

९ भक्ति योग संग्रह

१०. शब्द सदाचार स

टल पेज महारथी प्रेस, दिल्ली में छपा।

वर्ष ३ | ओ३म् भक्ति ओ३म् | संख्या १२

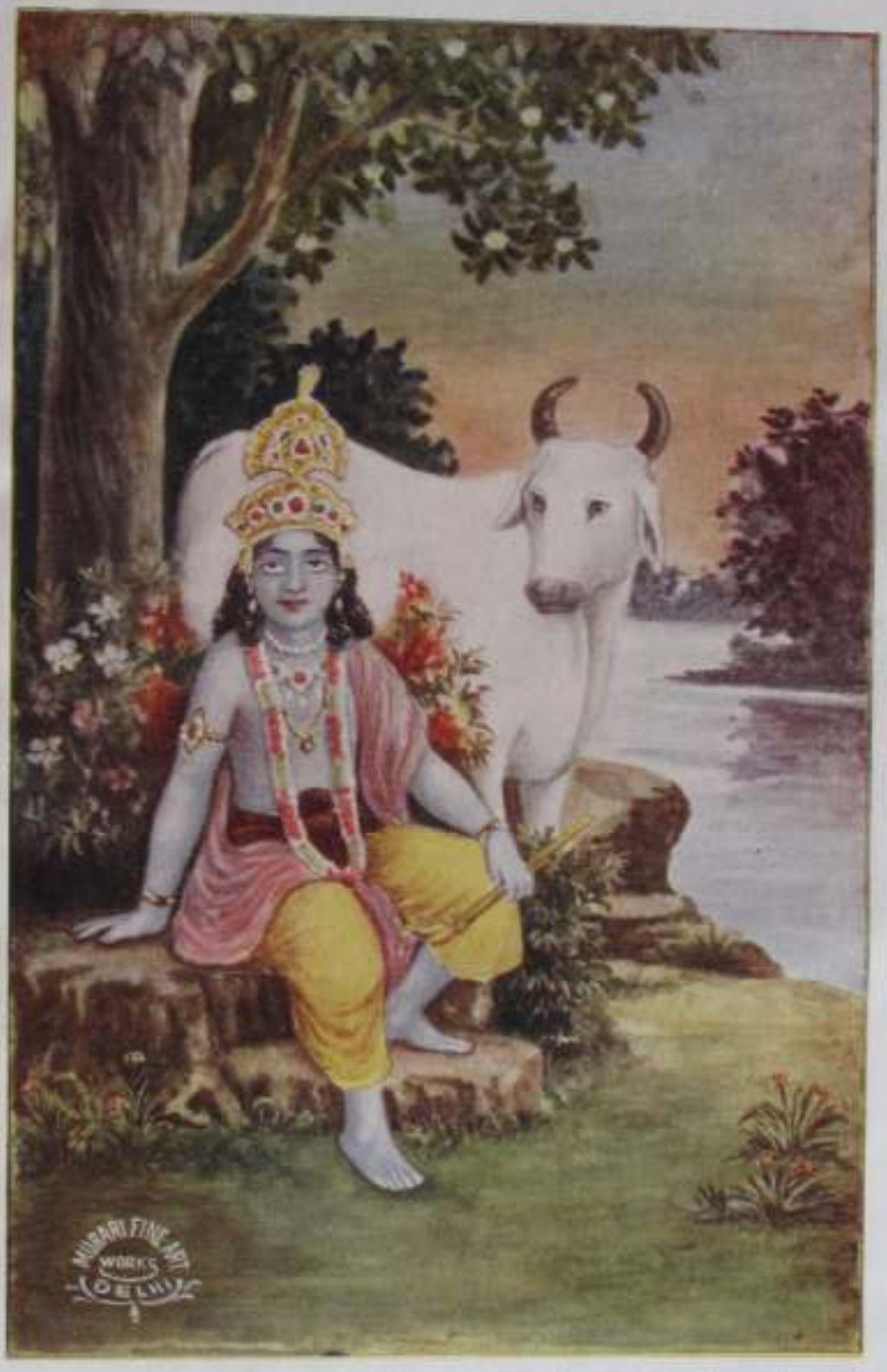

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

सर्व धर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

वार्षिक चन्दा २) | सम्पादक— म० कृष्णानन्द, भूमानन्द | एक प्रति का मूल्य ।)
भादपद १९८६

भक्ति के नियम

१. भगवान् की भक्ति का प्रचार करना, गो रक्षण और उसके लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना. वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना, सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना, राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. अग्रिम वार्षिक चन्दा सर्व साधारण से २) होगा

४. जो महानुभाव २५) रुपया देंगे वह पत्रके संरक्षक और ५) देने वाले सहायक होंगे।

५. बाहर का कोई भी व्यापारिक विज्ञापन नहीं लिया जायगा।

६. लेखोंको प्रकाशित करना, न करना, घटाना, व बढ़ाना सर्वथा सम्पादक के अधिकार में होगा।

७. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नामसे और व प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्ति के नाम से होना चाहिए।

८. जिन ग्राहकों के पास जिस मास की "भक्ति" न पहुंचे, उनको स्थानीय पोस्ट आफिस में पूछ कर उस मास की अमावस्या से पूर्व कार्यालय में सूचना भेजनी चाहिये। स्थानीय पोस्ट आफिस में बिना पड़ताल किये अथवा अमावस्या के बाद सूचना आने पर "भक्ति" नहीं भेजी जायगी।

९. पत्रोत्तर के लिये जवाबी, कार्ड भेजना चाहिये।

विषय सूची

विषय	लेखक	पृष्ठ
१. हरिहरात्मक स्तोत्र		४२७
२. प्रेम की अद्भुत शक्ति [	ले० श्री०	४२९
३. भगवद्भक्ति (	ले० श्रीपूज्य भोलेबाबा जी अनूपशहर	४३१
४. वाक्य सुधा [	ले० श्री सीताराम जी शास्त्री	४३९
५. निराश की आशा (कविता) [	ले० श्री हरिकृष्ण दासजी गुप्त दिल्ली	४४०
६. श्रीराम नाम महिमा [	ले० श्री गंगानाथ जी उपाध्याय	४४१
७. कृष्ण (कविता)	गंगाविष्णु पांडेय विद्याभूषण विष्णु	४४२
८. चोर [	ले० श्री मदन-गोपाल जी 'सिंहल' मेरठ	४४३
९. जगत प्रवाह [	ले० श्री स्वामी आत्मानन्द जी आगरा	४४४
१०. तीन मार्ग [	ले० श्री मधुमंगल जी मिश्र बी. ए.	४४७
११. गीता प्रेमी विद्वानों से निवेदन [	ले० श्री बाबूराम शुक्ल	४४९
१२. श्रीकृष्ण जयन्ती [	ले० भक्त शिरोमणी श्रीमथुरा प्रसाद जी जयपुर	४५०
१३. प्रेम विवरण [	ले० एक भिक्षु	४५१
१४. भगवदंक [	सम्पादक	४५७
१५. ग्राहकों के प्रति [	सम्पादक	४५७
१६. भजन		४५८

सहायक

चौ० हुकमसिंह जी निखरी ११)
बा० वैकुण्ठनाथ जी दिल्ली ११)
पं० जगन्नाथ जी रेवाड़ी ११)
ला० अमीचन्द नरसिंहदास भिवानी ११)
चौ०गणपतसिंह जी यादव पटौकड़ा परगना नारनौल ११)
चौ० मनोहरसिंह जी ,, पाल्हावास, रेवाड़ा ११)
ला० छोटेलाल घासीराम जी आर्यन मर्चेण्ट चावड़ीबाजार, दिल्ली ११)
ला० सरदारीलाल जी क्लाथ मार्केट दिल्ली ११)
राव घीसाराम जी गढ़ीबोलनी ११)
चौ० इन्द्रसिंह जी सिरहोल १०)
बा० शिवरामसिंह जी ,, ७)
माई गुलाबोदेवी दिल्ली ५)
चौ० रामजीलाल जी कन्स्टेबल नांगलोई ५)
भक्त बनारसीदास जी दिल्ली ५)
महाशय खादीराम जी मस्तापुर, रेवाड़ी। ५)
श्रीमती सूरज देवी धर्मपत्नी चौ० जोरावरसिंह जी एडीशनल जज अलीगढ़। ५)
श्रीमान पं० जयराम जी शर्मा 'सनातन' इलाहाबाद बैंक देहली। ५)
मि० एल. के. मिसरा इंस्पेक्टर, पोस्ट आफिस जयपुर ५)
राय बहादुर लेखनारायण सिंह जी बाढ़, पटना ५)
डाक्टर कवलकिशोर सिंह जी कलकत्ता ५)
राय साहब बांकेबिहारीलाल जी बी० ए० तहसीलदार चिड़ावा ५)
सेठ मेलाराम जी अग्रवाल भिवानी ५)
ला० रामचन्द्र जी वैद्य ,, ५)
जमादार दीपचन्द जी ,, ५)
ला० ओंकारमल जी कानपुर ५)
चौ० दीनतराम जी पटवारी नाहरी, सूबा दिल्ली ५)
भक्त हरीचन्द जी प्रेमहाउस, ,, ,,
चौ० धर्मसिंह जी कालूवास, तहसील रेवाड़ी ,,
प० मथुराप्रसाद ग्राम जमालपुर पो० कासन, गुड़गावां ५)
श्री० दिलीपसिंह जी, कैथल मंडी, करनाल ५)
चौ० मूलचन्दजी गुरावड़ा जि० गुड़गावां ५)
बा० जगन्नाथ यादव सदर बाजार लखनऊ ५)
सुमित्रादेवी ठिकाना ला० प्रेमशंकरजी पान का दरीबा जैपुर ५)
ला० न्यादरमल जी दिल्ली ,,
ला० रामेश्वर जी गुप्ता ,, ,,
ला० प्रभुदयाल जी अलीगढ़ ,,
,,

भक्ति

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥

Lakshmibilas Press, Calcutta.

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जाग्रत करने वाली सचित्र मासिक पत्रिका।

वर्ष ३ | भगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी, भाद्रपद पूर्णिमा सं० १९८६। | अङ्क १२

हरिहरात्मक स्तोत्र।

नमः षडर्धनेत्राय सप्तिनेत्राय वै नमः।
नमः पिंगल नेत्राय पद्मनेत्राय वै नमः॥ १॥

तीन नेत्र वाले के लिये प्रणाम है, दो नेत्र वाले के लिये प्रणाम है, पीले नेत्र वाले के लिये प्रणाम है कमल नेत्र के लिये प्रणाम है॥ १॥

नमः कुमार गुरवे प्रद्युम्नगुरवे नमः।
नमो धरणीधराय गंगाधराय वै नमः॥ २॥

स्कन्द के पिता को, प्रद्युम्न के पिता को, पृथिवीधारी को तथा गंगाधारी को प्रणाम है॥ २॥

नमो मयूरपिच्छाय नमः केयूर धारिणे।
नमः कपालमालाय वनमालाय वै नमः॥ ३॥

मयूर पुच्छ के लिये, केयूर धारी के लिये, कपालमाली के लिये तथा वनमाली के लिये प्रणाम है ॥ ३ ॥

नमस्त्रिशूल हस्ताय चक्रहस्ताय वै नमः ।
नमः कनकदण्डाय नमस्ते ब्रह्मदण्डिने ॥ ४ ॥

त्रिशूल हस्त को, चक्र हस्त को, कनक दण्डी को तथा ब्रह्मदण्डी को प्रणाम है ॥ ४ ॥

नमश्चर्म निवासाय नमस्ते पीतवाससे ।
नमोस्तु लक्ष्मीपतये उमायाः पतये नमः ॥ ५ ॥

चर्म ओढने वाले को, पीतवस्त्र धारी को, लक्ष्मीपति को तथा उमाके स्वामी को प्रणाम है ॥ ५ ॥

नमः खट्वांगधाराय नमो मुशलधारिणे ।
नमो भस्मांग रागाय नमः कृष्णांगधारिणे ॥ ६ ॥

खट्वांगधारी को, मूसलधारी को, भस्मांगराग को तथा कृष्णांगधारी को प्रणाम है ॥ ६ ॥

नमः श्मशान वासाय नमः सागर वासिने ।
नमो वृषभवाहाय नमो गरुड़ वाहिने ॥ ७ ॥

श्मशान में रहने वाले को, समुद्र में रहने वाले को, वृषभ की सवारी वाले को तथा गरुड़ की सवारी वाले को प्रणाम है ॥७ ॥

नमस्त्वनेकरूपाय भवरूपाय वै नमः ।
नमः प्रलयकर्त्रे च नमस्त्रैलोक्य धारिणे ॥ ८ ॥

अनेक रूप वाले को, भव रूप को, प्रलय करने वाले को तथा त्रिलोकी के धारण करने वाले को प्रणाम है ॥८॥

नमोस्तु सौम्यरूपाय नमो भैरव रूपिणे ।
विरूपाक्षाय देवाय नमः सौम्येक्षणाय च ॥ ९ ॥

सौम्य रूप को, भैरव रूप को, विरूपाक्ष को तथा सौम्य नेत्र को प्रणाम है ॥ ९ ॥

दक्ष यज्ञ विनाशाय बलेर्नियमनाय च ।
नमः पर्वतवासाय नमः सागर वासिने ॥ १० ॥

दक्षके यज्ञ का नाश करने वाले को, बलि को बान्धने वाले को, पर्वत वासी को तथा सागर वासी को प्रणाम है ॥ १० ॥

नमः सुररिपुघ्नाय त्रिपुरघ्नाय वै नमः ।
नमोस्तु नरकघ्नाय नमः कामांगनाशिने ॥ ११ ॥

देवताओं के शत्रुओं का नाश करने वाले, त्रिपुर का नाश करने वाले, नरकासुर का नाश करने वाले तथा कामदेव के शरीर को नष्ट करने वाले को प्रणाम है ॥ ११ ॥

प्रेमकी अद्भुत शक्ति

जाकर जापर सत्य सनेहू।
सो तेहि मिलै न कछु सन्देहू॥

श्रीचैतन्य महाप्रभु दक्षिण यात्रा के समय जब कूर्म स्थान में पहुंचे तब वहां श्रीकूर्म भगवान् के दर्शन कर प्रेमावेश में हंसते और रुदन करते हुये नृत्य करने लगे। प्रभु की लीला देख लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। इस स्थिति में जिसने भी उनका दर्शन किया वही वैष्णव होगया और "कृष्णहरि" उच्चारण करता हुआ बांह उठाकर नृत्य करने लगा। उन नृत्य करने वालों में भी वही चमत्कारिक शक्ति आगई। जिसने उनको देखा उसकी भी वही विचित्र हालत होगई। इस तरह अन्य सभी ग्रामवासी परस्पर में दर्शन कर कृष्ण प्रेम की बाढ़ में डूबने लगे।

दूसरे दिन प्रातःकाल प्रभु उस स्थान से आगे बढ़े। सर्वदा की तरह यहां भी सब ग्राम वासी उनके पीछे हो लिये लेकिन महाप्रभु ने किसी तरह समझा बुझा कर श्रीकृष्ण भजन करने का आदेश देकर उनको लौटा दिया। प्रभु करीब एक कोश आगे बढ़े होंगे कि उस कूर्म्म स्थान पर वासुदेव नामक एक ब्राह्मण प्रभुके दर्शनार्थ आ उपस्थित हुआ। ये वासुदेव परम भक्त किन्तु कुष्ट रोग ग्रसित थे। लेकिन इससे उन्हें जरा भी दुःख नहीं था क्योंकि भगवान् में उनकी दृढ़ भक्ति थी। भक्त के हृदय में एक ऐसा आनन्द श्रोत बहता रहता है कि जिससे संसार का कोई भी दुःख उन्हें कातर नहीं कर सकता। वासुदेव का सर्व अंग कुष्टसे ग्रसित होरहा है, उसमें कीड़े पड़ रहे हैं, सब को ऐसा मालूम होता है कि इससे इन्हें बड़ा कष्ट हो रहा है लेकिन उनके मनमें ये भाव भी नहीं उठते। वे समझते हैं कि उनका देह बिल्कुल त्याज्य नहीं है कारण उस से इतने कीड़ों का पोषण होता है। यदि कोई कीड़ा उस घावसे पृथ्वी पर गिर जाता है तब उसे कष्ट पाता देख पुनः उठा कर अपने च्युत स्थान पर यत्न पूर्वक रख देते हैं। जिस तरह माता अपने पुत्र का स्तन पान द्वारा पालन करती है उसी प्रकार वासुदेव इन कीड़ों का पालन करते हैं इसमें यह भी एक विशेष कारण है कि उन कीड़ों को छोड़ उनका और कोई अन्य कुटुम्बी या संगी नहीं है। उनके अंग की दुर्गन्ध के कारण उनके पास कोई भी नहीं आ सकता था इसलिये इन कीड़ों को एक मात्र साथी जान इनका पालन करते थे। वासुदेव ने रात्रि को सुना था कि श्रीभगवान् संन्यासी का वेश धारण कर ग्राम ग्राम में हरिनाम वितरण करते हुये भ्रमण कर रहे हैं। इसीलिये उनके दर्शन करने को वे उसी समय चल पड़े। शक्तिहीन होने के कारण बैठते उठते चलते पड़ते किसी प्रकार कूर्म्म स्थान की तरफ जाने लगे। भगवन् दर्शन के उत्साह ने कुछ बल देदिया जिससे येन केन प्रकारेण कूर्म्म स्थान पर पहुंच ही गये। लेकिन यहां आकर सुना कि प्रभु उनके आने के कुछ पूर्व ही चले गये। बिचारे वासुदेव बड़ी आशा करके आये थे, सो भी सामान्य आशा नहीं लेकिन उस में विघ्न देख सम्हल न सके और 'हे भगवन्! मैं आप के दर्शन न कर सका' कह कर मूर्छित हो गिर पड़े।

संन्यास ग्रहण के अनन्तर जब प्रभु राढ़ देश

की तरफ भ्रमण करने चले तब श्रीमती विष्णु प्रिया हा हरि ! श्री गौराङ्ग दर्शन दो, कह कर रुदन करने लगी थी जिस प्रकार उस समय प्रभु की गति रुक गई थी उसी तरह अब भी उपरोक्त वाक्य उच्चारण करके वासुदेव के मूर्छित होते ही उनकी गति रुक गई। यत्न करने पर भी पैर आगे नहीं बढ़े, तब खड़े हो गये मानों कुछ ध्यानपूर्वक सुन रहे हैं। फिर 'अभी आया' कह कर कूर्म्म स्थान की तरफ विद्युत गतिवत् इतनी तेजी से दौड़े कि उनका भृत्य भी उनके साथ न जासका और क्षणमात्र में वहां पहुंच गये। वहां पहुंच कर जरा भी घृणा न कर चिरकाल से मिलने वाले बंधु की तरह वासुदेव को आलिंगन करने लगे, जिससे कुष्ट रोग सहित जन्म ।जन्मान्तर के सारे दुःख नाश हो गये।

प्रभु के आलिंगन से चेतन प्राप्त कर वासुदेव अपना स्वर्ण सदृश शरीर देख कर प्रणाम कर इस प्रकार उनसे प्रार्थना करने लगे, "हे दयामय ! अपने यह क्या किया ? आप साक्षात् लक्ष्मी निकेतन होकर भी मुझे हृदय से आलिंगन करते हैं। जगत् के जीवमात्र घृणा के कारण मेरे निकट नहीं आते हैं। आपने जैसा किया उसके लिये आप ही समर्थ हैं साधारण संसारी जीव के लिये तो ऐसा करना संभव हो नहीं सकता कारण आपके लिये उत्तम और अधम सभी समान है आप को तो सभी एक जैसे प्रिय हैं।

वासुदेव फिर कहने लगे, 'प्रभो! इससे मुझे आनन्द नहीं होता मैं अस्पृश्य था बोल कर अभिमान मेरे निकट नहीं आसकता था इसीलिये आपके दर्शन हुये। अब आपने कृपा कर मेरी देह सुंदर बनादी इससे अब वह दीनता रहनी संभव नहीं है। मुझे सन्देह होता है कि वही अभिमान उदय होने से मैं आप से हाथ न धो बैठूं।"

ऐसे दीनता भरे वचन सुनकर प्रभुका हृदय द्रवीभूत हो गया और उनका चन्द्रवदन नयनाश्रुओं में डूबने लगा। वे विचारने लगे कि आज वासुदेव ने मुझे पराजित कर दिया। प्रभू बोले। "तुम्हारे सदृश भक्त को भी यदि अहंकार होगा तो फिर जीवगण श्रीकृष्ण को क्यों भजेंगे। घबराओ नहीं ! अभिमान तुम्हें स्पर्श भी नहीं कर सकेगा। तुम श्रीकृष्ण भजन करते हुये जीवों को भक्तिधर्म की शिक्षा दे उनका उद्धार करो।

वासुदेव को और कुछ कहने का अवसर नहीं मिला कारण प्रभु ये वचन कहते २ अन्तर्धान हो गये। इससे वासुदेव को कोई विशेष कष्ट नहीं हुआ क्योंकि प्रभु जैसे ही उनके चर्म चक्षुओं से अलग हुये वैसे ही हृदय में प्रकट हो उन्हें अलौकिक आनन्द देने लगे।

अब यहां प्रश्न होता है कि जब प्रभु ने वासुदेव को देह और भव रोग दोनों से मुक्त किया तब पहिलेही पथ भ्रमण का कष्ट सहे विना वहीं ठहर कर उसके लिये प्रतीक्षा कर सकते थे। इसका तात्पर्य यही है कि भगवान् और जीव सभी एक नियम से आबद्ध होकर परस्पर में एक दूसरे को अनवरत आकर्षण करते हैं। लेकिन जब यह आकर्षण पूर्ण मात्रा में होता है तभी जीव और भगवान् का मिलन होता है। इसकी वासुदेव में कुछ कमी थी जो कूर्म्म स्थान पर पहुंचते ही प्रभु को न पा पूर्ण हो गई। महारास की रात्रि को गोपीगण का विरह श्रीकृष्ण को न पा अति रुदन करते हुये असहनीय

हो गया तब उसी समय उन्हें भगवान् का दर्शन हुवा था।

भगवद्भक्ति

[ले० श्री० पूज्य भोले बाबा जी अनूपशहर]

एकाक्षरपदारूढं सर्वात्मकमखण्डितम् ।
सर्ववर्जितचिन्मात्रं त्रिपान्नारायणं भजे ॥

श्रवण निष्ठा

कुंडली—करिये ईश्वर ध्यान नित, भजिये ईश्वर नाम।
सुनिये नित भगवत् कथा, कीजे अन्य न काम ॥
कीजे अन्य न काम, भजन भगवत् का कीजे।
तन, मन, वच भजि राम, श्रेय अपना करि लीजे ॥
भोला ! भव बद शूल, मूर्ति भगवत् उर धरिये।
त्याग मान अपमान, ध्यान ईश्वर नित करिये ॥

संरामः-हे भगवन् ! कल आपने साधु सेवा और सत्संग की महिमा वर्णन की थी बहुत से भक्तों की कथायें भी वर्णन की थी। नवधा भक्ति की प्रथम निष्ठा श्रवण है, कृपा करके आज श्रवण का माहात्म्य सुनाइये और श्रवण का अनुष्ठान करने वाले भक्तों की कथायें भी सुनाइये।

मस्तरामः-(प्रसन्न होकर) भाई ! मंसाराम! अब तो तुम्हारी बुद्धि कुछ २ शुद्ध होती जा रही है, ऐसा अनुमान होता है। भगवत् के चरित्रों के सुनने को भक्ति तत्ववेत्ता श्रवण कहते हैं। संसार से पार होने के लिये यानी अपना उद्धार करने के लिए तथा भगवत्पद की प्राप्ति के लिये भगवच्चरित्रों का सुनना ही प्रथम और मुख्य उपाय है। समझने की बात है कि जब तक किसी वस्तु के गुण मालूम नहीं होते तब तक उस वस्तु में प्रेम नहीं होता, जब वस्तु के गुण सुनते हैं. तभी उसमें प्रेम होता है इसी प्रकार जब तक हम भगवत् के चरित्र सुनेंगे ही नहीं तब तक भगवत् में मन किस प्रकार लगेगा ? नहीं लगेगा। किन्तु जब भगवच्चरित सुनेंगे तबही भगवत् में मन लगेगा। भगवत् का ध्यान करना, भगवत् के मंत्रका जप करना, भगवत् की आराधना करना, यम नियम साधन करना और भगवत्तत्त्व का मनन करना, इन सबका श्रवण से संबंध है क्योंकि श्रवण विना इन में से कोई भी कार्य नहीं हो सक्ता जब गुरु, शास्त्रों से सुनते हैं, तभी श्रवण के अनुसार साधनों में प्रवृत्त होते हैं। विचार कर देखा जाय तो लोक परलोक के संपूर्ण कार्य श्रवण से ही चलते हैं श्रवण विना कोई कार्य नहीं होता। ब्रह्माजी को भगवत् ने सृष्टि उत्पन्न करने की आज्ञा शब्द द्वारा ही दी थी। इतना सुन कर भी ब्रह्माजी सृष्टि रचने को समर्थ न हुवे तब भगवत् ने 'तप' शब्द कहा, तप शब्द सुन कर भगवत् के कहे अनुसार ब्रह्मा जी तप करने लगे। जब बहुत दिन तप किया तब सृष्टि की रचना की। कोई २ नाद ब्रह्म के सुनने को ही मुक्ति मानते हैं। उपनिषदों और भागवत् में नादब्रह्म का वृत्तांत विस्तार से किया है परंतु उसका यहां वर्णन करने का कुछ प्रयोजन नहीं है क्योंकि भगवच्चरित्र

सुनना ही भगवत् भक्त मुख्य श्रवण मानते हैं, नारद-ब्रह्म का सुनना भिन्न मार्ग है। सारांश यह है कि सुने विना कोई कार्य नहीं होता और भगवत् की प्राप्ति के लिये भगवच्चरित्र सुननेके सिवाय और कोई मार्ग सुखसाध्य नहीं है। केवल भगवत् गुण गान सुनना ही सुख साध्य है, सत्संग की महिमा जो शास्त्र, पुराण इतिहास आदिकों में लिखी है उस का भी यह ही तात्पर्य है कि भगवच्चरित्र सुन कर भगवत् पद को प्राप्त हो। श्रवणनिष्ठा की महिमा स्वयं भगवान् ने श्रीमुख से अनेक स्थलों पर वर्णन की है। हरिवंश पुराण में लिखा है कि जहां भगवत् कथा सुनाई जाती है वहां वेद और सब शास्त्र उपस्थित रहते हैं, जिन को मुक्ति की इच्छ हो वे भगवत् कथा सुनें। भगवत् का वचन है कि जो भगवत् कथा रूप अमृत का कर्ण पुट द्वारा पान करता है, उसके सब पाप नष्ट होजाते हैं। एक स्थल पर कहा है कि जो कोई भाग्यहीन भगवत् कथा को छोड़ कर सारहीन निन्दित कथायें सुनते हैं, वे लोग शुद्ध भोजन छोड़ कर अभक्ष्य पदार्थ भक्षण करने वालों के समान हैं। जितने भक्त हुये हैं, अब हैं, आगे होंगे, वह सब श्रवण का प्रताप है।

यद्यपिभगवच्चरित्रों का सुनना सर्व प्रकार से ही मंगल रूप है, फिर भी यदि विधि पूर्वक, विश्वास सहित, प्रेम से सुने तो कहना ही क्या है, फिर तो सोना और सुगंध है, विधि कथा श्रवण की यह रीति है कि कथाके वक्ता व्यास को भगवत् रूप जाने हरिचरित्रों और हरिचरित्र वर्णन करने वाले शास्त्र में पूर्ण प्रेमहो, एकाग्र चित्त होकर कथा श्रवण करे, सुने हुये का भली प्रकार मनन करे और श्रवण मनन किये हुये अनुसार वर्ते क्योंकि यदि श्रवण किये अनुसार वर्ताव न हुआ तो गदहे के ऊपर लदी हुई पुस्तकें जिस प्रकार भार रूप हैं इसी प्रकार श्रवण करना भी निष्फल ही है, भगवत् कथा सुनने में ऐसी प्रीति हो कि सुनने से तृप्ति ही न हो! जो २ चरित्र भगवत् के सुने, उन को नवीन समझे, यह नहीं कि जो चरित्र एक वार सुन लिया सो सुन लिया दूसरी वार सुनने का क्या प्रयोजन है? नहीं वारम्वार सुने, पृथु महाराज ने भगवच्चरित्र सुनने को दश हजार कान मांगे थे। नवधा भक्ति में प्रथम जो श्रवण कहा है, उसका यह ही अभिप्राय है कि भगवच्चरित्र के श्रवण विना भक्ति प्राप्त नहीं होती। यद्यपि परस्पर बात चीत करने में भगवच्चरित्रों का सुनना, विष्णुपद आदि का सुनना भी श्रवण ही है फिर भी भगवद्भक्तों के संग में भगवच्चरित्र सुने जांय तो बहुत ही श्रेष्ठ है क्योंकि वहां श्रवण के सब साधन विद्यमान होते हैं जो कुछ सन्देह अथवा भ्रम होता है तुरन्त ही निवृत्त हो जाता है। पुराण आदि की कथा कराना, यहभी श्रवण की अच्छी रीति है क्योंकि ऐसा होने से स्वाभाविक ही सत्संग का लाभ होता है, कहीं २ कथा करने की रीति वर्तमान है और उससे यथेष्ट लाभ होता देखने में आता है। आजकल तो कथा कराने का निराला ही ढंग है। प्रथम भगवच्चरित्र सुनने में लोगों की रुचि ही बहुत कम होती है और कोई कोई मंदभागी तो ऐसा कहते सुनने में आये हैं:-'अजी कथा सुनने से क्या होता है? करनी प्रमाण है।' इन मूढ पुरुषों से पूछना चाहिये कि करनी प्रमाण है, यह तो ठीक ही है परंतु यह तो विचारना चाहिये कि लिखना, पढ़ना, सोनापिरोना आदि कार्य करने की चतुराई, लेन देन आदि संपूर्ण व्यवहार श्रवण द्वारा ही तो उनके जानने में आया है

तो जब तक भगवत् कथा न सुनेगें तब तक भगवत् का स्वरूप किस पूकार समझ में आवेगा ? बहुत से ऐश्वर्यवान्, सेठ साहूकार, सरदार, मुलाजिम सरकार ऐसे हैं कि अपनी पूसन्नता से तो कथा कहलवाते ही नहीं, कोई परिचित ब्राह्मण मोहल्ले का, लंगोटिया मित्र अथवा पुरोहित आगया और उसने गला दबाया तो उसकी कथा बैठा देते हैं और इष्टमित्रों को खबर कर देते हैं कथा प्रारंभ हो जाती है, सुनने कोई नहीं आता ! कोई सावकाश न मिलने का बहाना कर देता है, कोई काम काज की भीड़ बता देता है। कोई कह देता है कि क्या हमने पाप किया हैं, जो कथा सुनें ! कोई कह देता है कि अजी बहुत कथा सुनी हैं, वह ही राम रावण का युद्ध होगा, कंस कृष्ण का संग्राम होगा, कोई नई बात तो होगी ही नहीं, सब सुन चुके हैं कोई कहता है कि जिस दिन संपूर्ण होगी, पूजन करने आजांयगे, कोई अपने को बड़ा आदमी अथवा ओहदेदार समझ कर कंगाल अथवा छोटे नौकर के यहां कथा सुनने नहीं जाता। शतरंज, चौसर, गंजफा खेलने को समय मिल जाता है, कथा सुनने को फुरसत नहीं ! कुत्सित कथा, नाटक, खेल कूद, तमाशा, देखने दाम खर्च करके भी चले जायेंगे, कथा सुनने को मुफ्त भी जाना दोष समझेंगे ! भाग्यवश यदि चले भी गये तो थोड़ी देर भी मन न लगा, जाते ही निद्रा विलास में पड़ गये। जब किसी ने पूछा कि कथा सुन आये तो कथा और पण्डित दोनों की निन्दा करने लगे। प्रायः ऐसा होता है कि केवल कथा कराने वाला कथा सुनता रहता है, जब समाप्त होने का दिन आता है तो दश बीस बार बुलाने से लोकलाज से पूजन के समय लोग आ जाते हैं कि कहीं कोई अक्षर कान में न पड़ जाय। यदि कथा पूर्ण होने में देर होती है तो बुलाने वाले आदमी पर क्रोध करते हैं कि इतना पहिले क्यों बुला लाया। कोई पंडित से कहता है महाराज शीघ्रता कीजिये, संध्या होने वाली है, कोई उचक उचक कर पुस्तक के पत्रे को देखता है कि अंत की पांती आई या नहीं, कोई घर के अधिष्ठाता से कहता है कि आरती आदि का सामान तैयार कर रक्खो कि विलम्ब न हो, कोई मन ही मन में कहता है, अरे ! किस उत्पात में आन फंसे, बाजार की सैर करते अथवा बगीचे में टहलते, यहां आकर जेलखाने में फंस गये ! किसी ने मुद्रा भेज दिया औरों को दुःख न दिया। जैसे तैसे कथा पूरी हुई कोई भले मानस तो खोटा रुपया ही चढ़ा गये। वाह ! कहां तक बड़ाई की जाय कि नाच में जांय तो स्वप्न में भी नींद न आवे, प्रेममें भूख प्यास सब भूल जांय और सब से पहिले जा बैठें और भगवच्चरित्र सुनने का और कथा में जाने का यह वृत्तांत कि मानों किसी ने तोप के मुख पर खड़ा कर दिया हो !

मंसारामः महाराज ये सब बातें तो मुझ पर ही घटती हैं. मैं भी ऐसा ही किया करता था ! अब भी करता ही हूं। महाराज ! यह जीव बड़ा पापी है ईश्वरकी कृपा हो तो भलेही बेड़ा पार होजाय जीवकी करनी से तो पार होनेकी आशा है नहीं ! महाराज ! भगवच्चरित्र सुनने में मन लगने का कोई उपाय भी है, कृपा करके बताइये !

मस्तरामः-भाई मंसाराम ! एक भक्त भगवत् से इस प्रकार प्रार्थना करता हैः-हे श्रीकृष्ण स्वामी ! हे अन्तर्यामी ! हे भक्तवत्सल ! हे पूर्णतारणभंजन !

हे देवनिरंजन ! हे करुणा सागर ! हे सकल गुणआगर ! कोई दिन ऐसाभी आवेगा कि चन्द्रमाके सदृश आपके परम पवित्र चरित्र होंगे और मेरामन चकोरकी भांति होगा ! वह कौनसी घड़ी आवेगी कि आपके रूप अनूप का चिंतन और ध्यान, ऐश्वर्य और धन के समान होगा और मेरा मन लालची पुरुष के समान होगा ! हे करुणाकर ! महाराज ! जब अपनी भाग्यहीनता और अपने अपराधों का विचार करता हूं तो करोड़ों जन्मों तक ठिकाना लगता नहीं दीखता और जब आप के पतितपावन, दीनवत्सल, अधमोद्धारक, करुणाकारक नामों को सुनता हूं तो निर्भय हो जाता हूं, न भय को स्थान मिलता है, न चिंता का ठोर दिखाई देता है। हे भगवन् ! एक बात और भी गुप्त है, आप तो घट २ की जानते ही हैं, आप से कुछ छुपा नहीं है मेरा यह कथन ऊपर ऊपर नाममात्र का ही है, मन से नहीं है। यदि मन से दृढ़ और संतुष्ट, होऊं तो अभी बेड़ा पार है। हे भगवन् ! कहां तक कहूं जितने मेरे कर्म हैं, उनमें से एक कर्म भी ऐसा नहीं है कि जिसके अवलम्बन से आप के अंगीकार करने योग्य होजाऊं ! इतनी ही विनय बहुत है कि जैसा हूं, वैसा आप का हूं। आप ही मेरे प्रभु और मैं आपका किंकर हूं, यदि आपके चरित्रों का यह ध्यान समाज मेरे हृदय और नेत्रों में सर्वदा झलके तो मेरे सिवा कोई भाग्यवाला नहीं है।

ध्यान समाज

पावन नदी सरयू का दिव्य किनारा है, किनारे पर परमशोभायमान अखाड़ा है ! अखाड़े की दीवारें छोटी २ परम सुहावनी चिकनी २ हैं। चिकनी दीवारों पर चित्र विचित्र चित्राम खिंचे हुये हैं स्वर्ण के पानीके परम सुन्दर बेल बूटे बनाये गये हैं जिनको देखकर आंखोंमें रोशनी होती है, चित्तमें परम आह्लाद उत्पन्न होता है ! सांझ सवेरे रघुनंदन स्वामी अपने भाइयों और समान वयवाले लंगोटिया मित्रों सहित वहां आते हैं और नाना प्रकार के खेल कूद में तत्पर होते हैं। कभी तो शुक सारिकाओं के मधुर रसीले वयन सुनते हैं, कभी कबूतरों की गुटरगूं सुनने में मग्न हो जाते हैं ! कभी लालों की दो २ चोंचें होते हुये प्रेम पूर्वक निहारते हैं। कभी हंसों से क्षीर नीर पृथक् कराते हैं ! कभी सारस की लम्बी गरदन देख कर प्रसन्न हो गर्दन हिलाते हैं। कभी मयूर का नृत्य देख कर जामें में फूले नहीं समाते ! कभी पतंग आकाश में ऊंची बढ़ा कर हाथों पर से तोड़ देते हैं साथी लड़के लूटने दौड़ते हैं ! कभी घोड़ों पर सवार होकर सब साथियों के साथ दौड़ बदते हैं, जो आगे निकल जाता है, उस की पीठ ठोकी जाती है, जो पीछे रह जाता है, उस की तालियां पिटती हैं ! कभी धीरे २ घोड़े फेरते हैं, सवार होने और परिश्रम करने से मुख पर पसीने की छोटी २ बूंदें परम शोभा देती हैं ! कभी नेजे बाजी और कभी तीरंदाजी का स्वांग रचते हैं ! कभी मित्रों के साथ चौगान खेलते हैं, कोई हारता है, कोई जीतता है ! हारे हुये सकुच जाते हैं, जीते हुये उनकी तालियां पीटते हैं ! कभी अखाड़े में मल्लयुद्ध होता है ! कभी हाथी मेंढों आदि की लड़ाई का तमाशा देखते हैं ! कभी बराबर वालों के साथ हंसी ठट्ठा करते हैं ! कभी आपस में दंगामस्ती होती है ! कभी नाव पर सवार होकर बड़ भागिनी सरयू में जल विहार करते हैं, कभी उस पार जाते हैं, कभी इस किनारे पर आते हैं, कभी बहाव

पर नाव ले जाते हैं और कभी चढ़ाव पर इस प्रकार जल क्रीड़ा करते हुये भक्तों को आनन्द देते हैं ! कभी नृत्य गान सुन कर नाचने गाने वालों को मन वांछित द्रव्य आभूषण प्रसन्न हो कर देते हैं ! कभी गज-शाला में जाकर हाथियों को देखते हैं ! कभी घुड़-शालामें जाकर घोड़ों का अवलोकन करते हैं ! कभी शस्त्र शाला में जाकर अस्त्र शस्त्रों का निरीक्षण करते हैं ! कभी सामग्रीशाला में जाकर सामग्री की जांच करते हैं ! कभी ब्राह्मणों और भक्तों पर दया और कृपा दृष्टि करते हैं ! कभी घर जाये दास और दासियों के पालन पोषण की चेष्टा करते हैं ! आप की इस अद्भुत चेष्टा को ब्रह्मा, शिव, ब्रह्मानी, पार्वती सनकादि, नारदादि, आकाश में आकर देखते हैं और वहां से पृथिवी पर आकर नित्य आपके दर्शन करते हैं, मन को चरणारविन्दों पर न्यौछावर के वियोग के कारण दुःख से आंखों में से आंसू बहाते हुये, जलती हुई छाती सहित लौट जाते हैं ! आपके मुखारविन्द को देख कर करोड़ों कामदेव लजाते हैं और चन्द्रमा वारे जाते हैं ! घूंघर वाली अलकों को छुटी हुई देख कर श्याममेघ लज्जित होते हैं ! कानों में सुवर्ण के, कुंडल हैं, शिर पर जड़ाऊ किरीट मुकुट है, बाजूबन्द भुजाओं पर शोभा दे रहे हैं, कड़े और पहुंची हाथों में हैं, अंगुलियों में अंगूठी और छल्ले हैं पीताम्बरी बागा है, बागे के ऊपर मुक्कैश आदि जगह २ टंके हुये हैं जरी के शोभायमान दुपट्टे से कटि कसी हुई है, गले में बनमाला है, बनमाला के ऊपर मणि और मोतियों की माला पड़ी हुई है, कलंगी पहिने हुये हैं, पीताम्बरी धोती कमर पर विराजमान है, चरण कमलों में घुंघुरु शोभित हैं, नव वर्ष की वय है, ऐसे ही साज और श्रृंगार सहित भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, और दूसरे राजकुमार और सखा साथ में हैं ! छोटी २ कमान और तीर हाथों में हैं, मानों शोभा और श्रृंगार स्वरूपवान् होकर धरती पर आये हुये हैं। सब ब्रह्मांडों की शोभा और सजावट एकत्र होकर अयोध्यापुरी वासियों की चित्तवृत्ति को बला-त्कार से लूटते हैं ! अयोध्यापुरी वासियों के ऐसे भाग्य की बड़ाई करते हुये शेष शारदा भी अपने को धन्य मानते हैं !

कुं०—सुन्दर सुख कर शांति कर, रूप राशि भगवान।
दो गोरे दो सांवरे, हाथ लिये धनु बाण ॥
हाथ लिये धनुबाण, भक्त तारक भयहारक।
भुक्ति मुक्ति दातार, श्रेयकारक भवहारक ॥
भोला ! जा सब भूल, धारि उर आंगन अन्दर।
भरत लखन शत्रुघ्न, राम छवि अनुपम सुन्दर ॥

हे मंसाराम ! उपरोक्त ध्यान समाज का श्रवण कीर्तन और ध्यान करने से बुद्धि शुद्ध होती है, बुद्धि शुद्ध होने से भगवच्चरित्र सुनने में प्रीति होती है। हे मंसाराम ! भगवत् सर्व जगत्के कर्ताधर्ता हैं, भगवन् सीधे, सादे, सरल और सच्चे हैं, इसलिये अप्रत्यक्ष हैं आदि शक्ति चमक दमक वाली विचित्र रूपा है इस लिये प्रत्यक्ष हैं। चन्द्रावली श्रुति रूप से सर्वत्र व्यापक हैं। इनकी सहायता से भगवत् का प्रत्यक्ष होता है। भगवत् के प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष होनेमें भक्त का भावही कारण है, नहीं तो भगवत् सर्वदा परम प्रत्यक्ष हैं। श्रुति श्रवण रूप है, श्रवण ही भगवत् प्राप्ति का मुख्य उपाय है। भगवत् प्राप्ति की इच्छा वाले को श्रवण की ही शरण लेनी चाहिये। श्रवण करते २ आदि शक्ति की चमक दमक मोलम्मे के समान फीकी होजाती है और भगवन् के स्वरूप का आवि-र्भाव होता है भगवत् स्वरूप के आविर्भाव होने से

भगवत् और आदिशक्ति भिन्न नहीं रहते किंतु अभिन्न प्रतीत होते हैं। फिर भक्त जगत् को सियाराममय देखता है और सर्वदा के लिये सुखी हो जाता है, अखंड सुख की प्राप्ति श्रवण का फल है इस लिये सुखेच्छु का श्रवण मुख्य कर्तव्य है। हे मंसाराम! अब श्रवण परायण भक्तों की कथायें कहता हूं, ध्यान देकर सुनः-

कथा नारदजी की

हे मंसाराम! भगवद्भक्ति की सब निष्ठाओं में नारद जी महाराज अग्रणीय हैं, भागवत् धर्म के प्रचारक हैं और कीर्तन के विशेष प्रेमी हैं। नारद मुनि देवर्षि और परम भागवत् कहलाते हैं। यह पदवी इनको श्रवण के अवलम्ब से प्राप्त हुई है, इस लिए श्रवण निष्ठा में इनकी कथा लिखी जाती है। नारदजी भगवत् के मन हैं, ब्रह्माजी के पुत्र हैं। जगत्के उपकार करनेमें इनकी इतनी प्रीति है कि दो घड़ी से आधिक एक स्थान पर नहीं ठहरते। बाल्मीकि रामायण और श्रीमद्भागवत् ये दो जहाज जीवों को संसार समुद्र से तारने के लिये जो बने हैं, वह नारदजी के बनाये हुएहैं इन दोनोंमें नारदजी का दिया हुआ उपदेश ही है, जिन २ पर नारद जी की कृपा हुई है, वे २ भगवत् रूप ही होगये हैं। प्रह्लाद, ध्रुव, साठ हजार दक्ष प्रजापति के पुत्र प्रचेता आदि लाखों ही इन की कृपा से तरण तारण हो गये हैं जिन की गिनती नहीं हो सकती। इनकी कृपा तो संसार से उद्धार करने वाली है ही, इनका क्रोध भी मुक्ति का दायक है। जिन २ पर इन्हों ने क्रोध किया वे भी भगवत् को प्राप्त हुये। महादेव के गणों को शाप देकर मुक्ति दिलवाई, यमलार्जुन को वृक्ष बना कर भगवान् के हाथ से मुक्त कराया, इत्यादि अनेक चरित्र प्रसिद्ध हैं। नारदजी के चरित्र अपार हैं। इनके पूर्व जन्म का चरित्र जिस से इन को गणना श्रवण निष्ठा में हुई है, वह यह है:-भागवत् में लिखा है कि पूर्वकल्प में नारदजी दासी पुत्र थे। दुःख पड़ने से इन की माता ऋषीश्वरों के यहां टहल करके अपनी और नारद जी की पालना करती थी। ऋषीश्वरों के यहां कथावार्ता सत्संग हुआ करता था। नारद जी कथा सुना करते थे कथा सुनते २ जब इन को ज्ञान, वैराग्य और भक्ति प्राप्त होगई तो इनकी माता का देहान्त हो गया। पश्चात् नारद जी वन में जाकर भगवत् का ध्यान करने लगे। एक बार भगवत् के रूप अनूप का उनके हृदय में प्रकाश हुआ और शीघ्र ही अंतर्ध्यान हो गया, नारद जी उसी रूप अनूप के प्रेम में विकल होकर भगवद्भजन करते रहे। अंत में फल यह हुआ कि इस कल्प में ब्रह्मा के ऐसे प्रतापी पुत्र हुये, जिन की महिमा स्वयं ब्रह्माजी भी वर्णन नहीं कर सक्ते फिर दूसरा कौन वर्णन कर सक्ता है? कोई नहीं! किसी न किसी प्रकार जीवों को भगवत् संमुख करते ही रहते हैं,

कुं:-नारद चरित अपार हैं, जानि सके नहिं कोय।
दया करें हरि भक्ति दें, मुक्ति शाप से होय॥
मुक्ति शाप से होय, दुःख संसृति छुट जावे।
जन्म मरण निर्मूल, शोक भय पास न आवे॥
भोला! वेही धन्य, भक्तवर परम विशारद।
गाते हरि गुण आप अन्य उपदेशत नारद॥

कथा गरुड़जी की

गरुड़ जी भगवत् के पार्षदों में हैं, इसलिये भगवद्भक्त इन को गणना सेवा निष्ठा वालों में करते हैं किंतु एक समय इनको मोह हो गया था इसलिये इन्होंने काकभुशुण्डि के पास जाकर जब भगवत् के चरित्र सुने तब उनको ज्ञान हुआ था इस लिये श्रवणनिष्ठा वालों में भी उनकी गिनती है, जब श्रीरामचन्द्र जी महाराज ने विजय के हेतु लंका पर चढ़ाई की तो रावण का बेटा मेघनाद युद्ध करने आया और संपूर्ण सेना सहित दशरथ राजकुमार महाराज को नाग पाश में बांध लिया। नारद जी ने गरुड़ को भेजा गरुड़ जी ने सब सर्पों को खालिया और इन्द्र जी की माया दूर होगई। गरुड़ को भ्रम होगया और मन में विचारने लगे कि मैंने तो सुना था कि श्रीरघुनाथ जी ईश्वरावतार हैं, यह तो तुच्छ राक्षस के पाश में फंस गये ? किसी प्रेमी के पाश में फंसे होते तब भी ठीक था यह कैसे ईश्वर हैं ? जिनको राक्षस ने बांध लिया ? सुनता था कि इनकी माया के पाश में अगणित ब्रह्मांडों के नियंता ब्रह्मादिक देवता फंसे हुये हैं और इनका नाम लेने से जीव की जन्म मरण की फांसी कट जाती है आकर देखा तो इनका प्रभाव कुछ भी देखने में नहीं आया, जब मैंने पाश काटा तब पाश से मुक्त हुये। इस प्रकार मोहित हुये गरुड़ जी ब्रह्मा जी के पास गये।। ब्रह्मा जी मोह दूर न कर सके उन्होंने शिवजी के पास भेज दिया। शिवजी ने, पक्षी की बोली पक्षी ही भली भांति समझेगा, ऐसा विचार कर काकभुशुण्डि के पास भेज दिया, गरुड़ जी शिव जी के कहे अनुसार नीलाचल पर काकभुशुण्डि के पास गये और वहां जातेही उनका मोह दूर हो गया। वहां उन्होंने संपूर्ण रामायण का श्रवण किया और नित्य ज्ञान को प्राप्त हुये। सच है कि भगवच्चरित्र अज्ञानतम को दूर करने के लिये सूर्य है और कामना पूर्ण करने के लिये कल्पवृक्ष और कामधेनु है।

कुः—माया भगवत् है प्रबल, मोहा सब संसार।
जो सुनता भगवत चरित, सोही होता पार॥
सोही होता पार, कथा भगवत् की सुनता।
होवे पूर्ण अशोक, शोक से शिर नहिं धुनता॥
भूले गरुड़ सुजान, काक भगवत् गुण गाया।
पाया सांचा ज्ञान, भगी छूटी सब माया॥

कथा राजा परीक्षितजी की

अभिमन्यु के पुत्र, अर्जुन के पौत्र राजा परीक्षित श्रवणनिष्ठा में प्रधान और अग्रगण्य हुये हैं। श्रीमद्भागवत् की प्रवृत्ति संसार में इन्हीं के द्वारा हुई है। श्रीमद्भागवत् की महिमा अकथनीय है करोड़ों जीव भागवत् को सुन कर परम पद को प्राप्त हुये, होते हैं और आगे होंगे। जब पांडवोंने संसारका त्याग किया और परीक्षित को राज्य देदिया तब परीक्षित नीति पूर्वक प्रजा का पालन करने लगे। दिग्विजय का धर्म पालन करने के लिये जब वे निकले तो कुरुक्षेत्र में कलियुग ने छल किया। उस छल के कारण ऋषि बालक का राजा को शाप हुआ। जब राजा को शाप का वृत्तांत मालूम हुआ तो तुरंत ही राजा ने जनमेजय अपने बड़े पुत्र को राजगद्दी दे दी आप गंगा तट पर उत्तरमुख आन बैठे और अपने उद्धार के निमित्त ऋषीश्वरों और ब्राह्मणों को एकत्र किया। संयोगवश शुकदेव जी वहां आगये और श्रीमद्भागवत् श्रवण कराया। जब कथा समाप्त हुई तुरंत ही अपने

शरीर की सुधि भूल कर भगवत् के चरणों में लीन होकर राजा समाधि में मग्न हो गये। उसी समय तक्षक नाग ने आकार ऋषि बालक का वचन पूरा कर दिया, राजा शरीर त्याग कर जहां से फिर लौट कर नहीं आते उस परम धाम को चले गये। सच है कि भगवत् चरित्रों में जिस का मन लग गया है, उसको अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष इसी शरीर में प्राप्त हैं।

कुं०:-जिनके मन में हैं बसत, भगवत् चरित ललाम।
भोला वे हैं पावते, भगवत् पावन धाम॥
भगवत् पावन धाम, श्रवण से निश्चय पावत।
भूप परीक्षित तुल्य लौट नहिं जग में आवत॥
अर्थ धर्म कामादि, प्राप्त हों जीवत तन में।
भगवत् चरित पुनीत, बसत हैं जिनके मन में॥

कथा लालदासजी की

लालदास जी ऐसे परम भक्त हुये हैं कि उन का हृदय भगवत् चरित्रों का स्थान हो गया था। जैसे भगवत् में प्रीति करते थे इसी प्रकार गुरु में प्रेम रखते थे, लोभ कभी स्वप्न में भी उनके पास न आया, जैसे कमल पत्र जल में रहता हुआ भी जल से निर्लेप रहता है इसी प्रकार संसार में रहते हुये संसार के हर्ष शोक उनको स्पर्श नहीं करते थे। भगवच्चरित्र सुनने में साक्षात् राजा परीक्षित के समान थे और उन्हीं के समान भगवद्धाम को गये। एकबार बघेरा ग्राम में श्रीमद्भागवत् की कथा हो रही थी। जब कथा संपूर्ण हुई, लालदास जी ने उसी समय भगवत् ध्यान की समाधि लगा कर शरीर त्याग दिया और जहां राजा परीक्षित गये थे, उसी धाम को गये।

कुं०-सुन्दर भगवत चरित जे सुनत नहीं मन लाय।
जीवन तिन का व्यर्थ है, आयु अकारथ जाय॥
आयु अकारथ जाय, योनि नाना में भटकत।
भोगत दुःख अपार, होंय पीड़ित शिर पटकत॥
भोला! हो एकाग्र, नाच मत जैसे बन्दर।
लालदास की भांति, कथा हरि की सुन सुन्दर॥

हे मंसाराम! उपरोक्त सब का सार यह है कि जितने ध्यानी, ज्ञानी, सिद्ध, योगी भक्त हुये हैं सब भगवच्चरित्र सुन कर ही हुये हैं। श्रवण बिना किसी को कोई सिद्धि न तो प्राप्त हुई, न होती है और न आगे होगी। लोक परलोक के सब कार्य श्रवण से ही सिद्ध होते हैं और भगवत्पद की प्राप्ति भी श्रवण से ही होती है। श्रवण की महिमा दिग्दर्शन मात्र नीचे के छन्द में दिखलाई है।

श्रवण महिमा

हरिगीत छन्द

(१)

यज्ञादि करना मंत्र जप तप श्रवण ही बतलाय है।
जो राज्य का कानून है, वह भी श्रवण जतलाय है॥
व्यापार खेती आदि भी सब श्रवण ही सिखलाय है।
छोटा बड़ा हो कार्य कुछ भी बिनु श्रवण नहिं आय है॥

(२)

विद्यार्थि जब करता श्रवण विद्या विनय से युक्त हो।
सेवा अतिथि करता गृही, करि श्रवण धन संयुक्त हो॥
कैसे तपस्या होय है, वनवासि सुन कर जानता।
करता यही है जब श्रवण, शिव तत्व तब पहिचानता॥

(३)

भगवच्चरित करि श्रवण भोगी प्राप्त करता भोग है।
भगवच्चरित करि श्रवण योगी सिद्ध करता योग है॥

भगवत् कथा सुनिये सदा, यदि इष्ट तुमको मुक्ति है।
भगवत् कथा कीजे श्रवण, प्यारी तुम्हें यदि भक्ति है।

(४)

भगवत् कथा के श्रवण से, मन मैल सब धुल जाय है॥
ज्यों काच हो मन स्वच्छ, चित्ता चित्त की जल जाय है।
आल्हाद होय प्रसाद होवे बुद्धि थिरता पाय है।
अभिमान नहिं हो देह में, संसार जड़ कट जाय है॥

(५)

सर्वत्र भगवत् भासते, नहिं द्वेष हो नहि राग हो।
अपने पराये एक सम, सब में सहज अ राग हो॥
नहिं शत्रु ही नहि मित्र ही, जग दीखता है राममय।
दुख रूप था संसार जो अब होय है आरामय॥

(६)

सुख सिंधु व्यापक एक रस नहिं आदि है नहिं अन्त है।
नहिं जोड़ है नहिं तोड़ है, विभु एक देव अनन्त है॥
भगवत् सिवा नहिं अन्य है, तब मोह का क्या काम है।
नहिं काम कुछ भय शोक का, सबमें रमा प्रभुराम है॥

(७)

नारद सुनी शुचि हरि कथा, संसार भर में मान्य है।
श्री विष्णु पार्षद गरुड़जी सुनि हरि कथा सन्मान्य है॥
पाये परीक्षित आदि हरिपद सुनि कथा हरि ध्यान धरि।
भोला ! श्रवण करि हरि कथा, दूजा न कुछ भी कान धरि॥

वाक्य सुधा

[ले० श्री० सीतारामजी शास्त्री]

१ इस धोखे में न रहो, कि ईश्वर से छल चल जायगा, मनुष्य जो कुछ बोता है वही काटता भी है।

२ संसार में सद्स्वभाव से असंख्य लाभ होते हैं, और अच्छा स्वभाव, संसर्ग, विद्या और अनुभवों के प्रभाव से बनता है, सुशिक्षा से ही धर्माचरण की सृष्टि होती है।

३ भक्त वह है जो अपने मन को पृथ्वी के समान सहिष्णु और परोपकारी बनाले, जिसमें लोग खाद डालते हैं परन्तु वह अन्न ही देती है।

४ जो बाहर से बहुत सुन्दर है पर जिसका मन मैला है उससे तो कौवा अच्छा है जो बाहर भीतर एक रंग है।

५ दुर्भाग्य छोटे हृदयों को दमन कर अपने वश में कर लेता है परन्तु विस्तृत हृदय उस पर विजयी होकर स्वयं उसे दबा देते हैं।

६ हम अपना चित्त परमात्मा की ओर नहीं लगाते इससे परमात्मा को भी हमारी ओर देखने की फुरसत नहीं मिलती। जब हम थोड़े से काम वालों को ही फुरसत नहीं तब सारे जगत् का भरण पोषण करने वाले परमात्मा को फुरसत कहां ? यदि हमको अपनी वृत्तियां उसकी तरफ लगाने का समय मिले तो उसको भी हर समय फुरसत है।

७ विद्या वह है जो धर्म और सदाचार में श्रद्धा उत्पन्न कराती है। जो सारे विश्व में परमात्मा के स्वरूप का दर्शन करा कर सब से निर्वैर बनाती है, जो समस्त अनेकता में एकता का वास्तविक स्वरूप बतला कर जीव को सदा के लिये परम सुख के स्थान पर पहुंचा देती है। हमें उसी ब्रह्मविद्या का आश्रय लेना चाहिये।

८ संसार के समस्त दुःखों से मुक्त होकर ईश्वर-साक्षात्कार के लिये नाम जप ही सर्वोपरि युक्ति युक्त साधन है।

९ जो व्यक्ति मनुष्यत्व को प्राप्त करना चाहता है उसे अपनी आत्मा के विस्तृत राज्य पर अधिकार रखना चाहिए।

१० जो पापों से छूटे हुये हैं, जिनकी इन्द्रियां शान्त हैं और जो समाहित चित्त हैं वे ही पुरुष सद्गुरु की कृपा से ज्ञान द्वारा परमात्मा को प्राप्त करते हैं।

११ पूर्ण महात्मा और सज्जनों के संग का नाम ही सत्संग है, इसे आदमी निष्ठा के साथ करे तो वह लोहे से सोना बन जाय।

१२ जो कर्म दिखावट और प्रभुत्व की अभिलाषा से किये जाते हैं, वे निरर्थक हैं। उनसे आत्मशुद्धि नहीं होती। शरीरकी शुद्धिसुकर्मसे, इन्द्रियोंकी सत्य और दया से, तथा चित्त की मनको वशमें रखने, आत्मा को निर्लेप करने, मौन रहने और सबको सुख पहुंचाने से होती है।

१३ ईश्वर भक्त का चेहरा चमकदार होता है, नेत्र नीचे और नरम होते हैं। वह सब का हितैषी होता है। उसका स्वभाव भी सरल होता है। शरीर के श्रृंगार से उसे नफरत और सादगी से प्रेम होता है।

१४ दयालु पुरुष दूसरे के दुःख से पीड़ित होजाते हैं। यह भावना ईश्वर के प्रति सर्वोत्कृष्ट पूजा के सदृश है, जिसे कि मनुष्य भगवदर्चना के रूप में उपस्थित कर सकता है।

१५ यह परमात्मा न चक्षु का विषय है, न वाणीका है, न इन्द्रियों का है और न कृच्छ-चान्द्रायणादि तप या अग्नि होत्रादि कर्मों का ही विषय है, जिसका अन्तः करण ब्रह्मज्ञान की ज्योति से प्रकाशित है, वही इस अविभक्त परमात्मा का ध्यान करता हुआ उसे देखता है।

निराश की आशा

[ले० श्री हरिकृष्णदास जी गुप्त]

नौका मेरी परी भव-वारिधि में भगवन्!
तीव्र तृष्णा तरंग तहलका मचात है ॥ १ ॥
स्वारथ के मगर डगर डगर डोलते।
गरव की महामीन *हिय डरपात है ॥ २ ॥
छिद्र-पूर्ण नौका डग मग डग मग करै।
आशा छबिलीं मुंह फेरि के करै बात है ॥ ३ ॥
हर ओर निहार निहार निराशा को हरि!
अब हारि के दृष्टि तिहारी ओर जात है ॥ ४ ॥

---

* ह्वेल मछली जो बड़े २ जिहाजों को टक्कर मार कर उलट देती है।

श्रीराम नाम महिमा

१०वें अंक से आगे

[ले० श्री० गंगानाथ जी उपाध्याय]

रामनाम जना भक्तो रामनाम जनप्रियः ।
सपूतो निर्विकल्पश्च सर्वपाप बहिर्मुखः ॥ १६ ॥

राम नाम जनों का भक्त है, राम नाम जनों को प्रिय है, पवित्र है, निर्विकल्प है और सब पापों से बहिर्मुख है।

राम नाम प्रसंगेन ये जपंतीह चार्जुन ।
तेपि ध्वस्ताखिलाघौघा यांति रामास्पदं परम् ॥ १७ ॥

हे अर्जुन ! राम नाम का प्रसंग से, इस जप करते हैं, वे भी सर्व पापों को धोकर राम के परम पद को प्राप्त होते हैं।

घोषयन्नाम निर्वाणं कारणं यस्त्वनन्यधीः ।
तस्य पुण्य फलं पार्थ वक्तुं कः शक्यते भुविः ॥ १८ ॥

जो अनन्य बुद्धि वाला निर्वाण के कारण नामका उच्चारण करता है, हे पार्थ ! उसके फल को पृथिवी पर कौन कह सक्ता है यानी कोई नहीं कह सक्ता।

तस्मान्नामानि कौन्तेय भजस्व दृढचेतसा ।
रामनाम समायुक्तास्तेमे प्रियतमाः सदा ॥ १९ ॥

इसलिये हे कुन्तीपुत्र ! दृढ चित्त होकर नामों को भज, जो राम नाम से सम्यक् युक्त होते हैं, वे मुझे सदा बहुत ही प्रिय हैं।

विसृज्य रामनामानि कर्म कुर्वन्ति ये नराः ।
अप्राप्य सद्गतिं पार्थ भ्रमित्वा कर्म वर्त्मसु ॥ २० ॥

जो मनुष्य राम नाम को छोड़ कर कर्म करते हैं, हे पार्थ ! वे सद्गति न पाकर कर्म मार्गों में भ्रमण करते हैं।

सर्व योनिषु कौन्तेय भ्रमंति ते नराधमाः ।
विसृज्य राम नामानि माया मोहितचेतसः ॥ २१ ॥

हे कुन्तीपुत्र ! वे अधम मनुष्य माया से मोहित चित्त वाले राम नामों को त्याग कर सर्व योनियों में घूमते हैं।

यदृच्छयापि श्रीराम नाम गृह्णंति सादरम् ।
सपूतः सर्वपापेभ्यो राम नाम प्रसादतः ॥ २२ ॥

जो पुरुष इच्छा बिनाभी आदर सहित श्रीराम नाम का ग्रहण करते हैं, वे राम नाम के प्रसाद से सब पापों से मुक्त होजाते हैं।

येन केन प्रकारेण नाम मात्रैक जल्पकाः
श्रमं विनैव गच्छन्ति परं धाम्नी समादरात् ॥ २३ ॥

जिस किसी प्रकार से भी आदर से एक नाम मात्र के जप करने वाले बिना श्रमही परम धाम को प्राप्त होते हैं।

गीत्वाच राम नामानि विचरेद्राम सन्निधौ ।
इदं ब्रवीमि ते सत्यं तस्य वश्यो जगत्पतिः ॥ १४ ॥

रामके नामों को गाकर राम की संनिधि में विचरे मैं तुझ से यह सत्य कहता हूं कि जगत्पति उसके वश हो जाते हैं।

गीत्वा च राम नामानि ये रुदन्ति नरोत्तम ।
तेषां हरि परिक्रीतो परमेशेन संवृतः ॥ १५ ॥

हे नरोत्तम ! राम नामों को गाकर जो रुदन करते हैं, परं ऐश्वर्य से युक्त हरि उनके खरीदे हुये हो जाते हैं।

राम नाम जपाज्जीवा अनायासेन संसृतिम् ।
तरंत्येव तरंत्येव तरंत्येव सुनिश्चितम् ॥ २६ ॥

राम नाम जपने से जीव बिना प्रयास ही संसार से तरही जाते हैं, तरही जाते हैं, निश्चय तरही जाते हैं।

नमोस्तु नामरूपाय नमोस्तु नामजल्पिने ॥
नमोस्तु नाम साध्याय वेदवेद्याय शाश्वते ॥ २७ ॥

नाम रूप वाले के लिये नमस्कार है, नाम कथन करने वाले के लिये नमस्कार है, नाम से प्राप्त होने वाले वेद वेद्य शाश्वत के लिये नमस्कार है।

नमोस्तु नामनित्याय नमो नाममयाविने ।
नमोस्तु नाम शुद्धाय नमो नाम मयाय च ॥ २८ ॥

नित्य नाम के लिये नमस्कार है, नाम की भावना करने वाले के लिये नमस्कार है, शुद्ध नाम के लिये नमस्कार है और नाम वाले के लिये नमस्कार है।

श्री रामनाम माहात्म्यं यः पठेच्छ्रद्धयान्वितः ।
स याति परमं स्थानं रामनाम प्रसादतः ॥ २९ ॥

जो श्रद्धा युक्त होकर राम नाम के माहात्म्य का पाठ करता है वह राम नाम के प्रसाद से परम स्थान को प्राप्त होता है।

रामनामार्थमुत्कृष्टं पवित्रं पावनं परम् ।
ये ध्यायन्ति सदा स्नेहास्ते कृतार्थाः जगत् त्रये ॥ ३० ॥

राम नाम के उत्कृष्ट, पवित्र और परम पावन अर्थका जो सदा स्नेह से ध्यान करते हैं वे तीनो-जगत में कृतार्थ हैं।

दोहाः—भक्ति भाव अनुराग से राम नाम का ध्यान।
प्रति दिन निर्मल चित्तसे करते रहो सुजान् ॥

कृष्ण

[ले० श्री गंगाविष्णु पाण्डेय विद्या भूषण, "विष्णु"]

(१)

तूने ही नंद-यशोदा-गृहको क्रीड़ा का आगार किया।
तूने ही माखन चुरा चुरा गोकुल में प्रेम-प्रचार किया ॥
तूने ही शिर पर मोरों के पंखों का है शृंगार किया।
तूने ही वंशी बजा बजा सखियों का दिल बेज़ार किया ॥

(२)

तूने ही यमुना में घुस के काली का मान फरार किया।
तूनेही फण पर नृत्य कलाका दिखलाना स्वीकार किया ॥
तूनेही गायों का पालन तन-मन से सभी प्रकार किया।
तूनेही सब ब्रजवालों से भाई का सा व्यवहार किया ॥

(३)

तूनेही नख पर गिरवर, धर, ब्रज ग्वाल-बाल उपकार किया।
तूनेही कंस मार करके वसुदेव-देवकी प्यार किया ॥
तूनेही चाल बता करके खल काल यवन को क्षार किया।
तूने ही पुरी द्वारिका में ऊधव के साथ विचार किया ॥

(४)

तूने ही छलसे जरासंध को चिरवा करके चार किया।
तूने ही भक्त युधिष्ठिर का संपूर्ण यज्ञ संभार किया ॥
तूनेही उसको मार दिया, जिसपर कुछ मनमें खार किया।
तूनेही ज्ञान सिखा करके फिर अर्जुन को तैयार किया ॥

चोर

[ले० श्री० मदनगोपालजी "सिंहल"]

नेत्रो ! तुम वीर हो और यथार्थ में वीर हो। संसार में ऐसा कौन है जो तुम्हारे सामने रणक्षेत्र में आ सके। क्या गृहस्थी और क्या संन्यासी सभी तुम्हारा लोहा मानते हैं। जिस समय तुम भौंह-कमान पर अपने तीर चढ़ाकर चलाते हो बड़े २ बांके वीर तुम्हारे सामने नहीं टिक सकते। इसीलिये तो तुम्हें इस देह-भवन का द्वार रक्षक बनाया गया है। यदि तुम जैसे वीर इस स्थान पर न हों तो न जाने कौन कौन इस भवन में घुस जायें और न जाने क्या क्या वस्तु यहां से ले जायें। देखो ! सावधान रह कर अपने कर्तव्य का पालन करते रहना। आज कल चोरों का बहुत जोर हो रहा है।

× × × ×

हैं ! क्या घनश्याम आ रहे हैं ? अहा कितने सुन्दर हैं, कितने मन मोहक हैं ! सिर पर मोर मुकट कानों में कुण्डल, गले में पुष्पों की मालायें, हाथों में बंशी, कमर में पीताम्बर मन को मोहे लेते हैं।

नेत्रो ! सावधान ! समय बुरा है। ऊपर से ही देख कर भीतर की थाह पाना कठिन है। कनक-घट में विष का होना असम्भव नहीं है।

× × × ×

आओ, प्रीतम, प्राणाधार, प्राणनाथ, जीवन-धन आओ ... ... परन्तु यह क्या ? मुखम्यान से मुस्कान तलवार और उस का देह-मदन-रक्षक नेत्रों पर वार। सर्व नाश ! सर्व नाश !

मेरा मन ! हैं मेरा मन कहां गया ? प्यारे श्याम ... ... हैं ! वह भी गायब। नेत्रो नेत्रो ... अरे चुप क्यों हो ... ... रोते हो ... ... क्यों ? क्या घायल हो ? अरे अब समझा ! मन-मोहन तुम्हें इस अवस्था को पहुंचा कर मेरा मन ले भागे। सब कुछ लूट ले गये।

× × × ×

अरे नेत्रो रोते क्यों हो ? जो किया उसका फल पाओ। यदि तुम उन्हें आते देख पलक-कपाट बन्द कर लेते तो उन्हें ऐसा करने का साहस ही न होता। अपराध तुम्हारा है तुम्हें तो उस अपराध का फल भोगना पड़ेगा ही परन्तु मैं तुम्हारे पीछे चनेमें घुन की तरह पिस गया। तुम्हारे पीछे बरबाद होगया। तुम्हारे जैसे कायर द्वार रक्षक पर निर्भर रह कर कहीं का न रहा ! दिन दहाड़े लुट गया ! अपना सब कुछ खो बैठा। किन्तु अब तुम्हारे रोने से क्या होता है ? चुप रहो। बताओ, वे मन को लेकर भागे किधर को हैं। आओ, उधर ही चलें। तुम रास्ता बताना मैं ढूंढूंगा।

× × × ×

छलिया कहीं के ! क्या भले मानसों के भी ऐसे काम होते हैं ? राजाओं के राजा होकर, लक्ष्मी के पति होकर, सारे संसार के स्वामी होकर चोरी करते फिरते हो ! लज्जा नहीं आती ?

जो तेरे द्वारा लूटे नहीं गये हैं कहते हैं 'गोपाल सहस्र नाम' में तुम्हें 'चोर-शिखा मणि' लिख कर उसके लेखक ने तुम्हारा अपमान किया है। कहा करें कहने वाले, हमें इसका ध्यान नहीं, हम तो तुझे सदा 'चोर' कहेंगे और चोर ही नहीं किन्तु 'चोर-शिखामणि' कहेंगे कारण तैंने हमारा सब कुछ लूट लिया है 'चौर-अधिपति'!

जगत् प्रवाह

[ले० श्री० स्वामी आत्मानन्दजी]

जीवों के भोग और पुरुषार्थ की भूमिका का नाम जगत् है। जगत्का प्रवाह नदी के प्रवाह के समान है। जैसे नदीमें जलका प्रवाह है तैसेही जगत् में विषय का प्रवाह है। जैसे नदी में अनेक जंतु हैं, इसी प्रकार जगत् में अनेक प्रकार के जीव हैं। जैसे नदीके जलमें पड़ी वस्तु ऊपर नीचे आती जाती है, इसी प्रकार मनुष्य ऊंच नीच योनियोंमें आते जाते हैं। ऊंचनीच योनियोंमें जाकर अनेक दुःख सुख उठाते हैं। कोई स्त्री की कामना से अनेक प्रकार के कष्ट पाकर दुःख भोग रहे हैं, कोई धन, कोई ऐश्वर्य आदि की कामना करके ऊंच नीच योनियों को प्राप्त होते हैं, कभी शांति को प्राप्त नहीं होते, घटी यंत्रके सदृश संसार प्रवाह में एक गर्तसे दूसरे गर्त को प्राप्त होते हैं, सुखके भोग के लिये कर्म करके सुखको प्राप्त होते हैं, साथ में दुःखका अनुभव करते हैं, कर्म से भोग और भोग से कर्म इस प्रकार जन्म मरण के प्रवाह में पड़े हुए भ्रमण कर रहे हैं। कोई स्वर्ग की कामना से यज्ञादिक करके स्वर्ग को प्राप्त होता है फिर पुण्य क्षीण होने पर मनुष्य लोक में जन्म लेकर स्वर्ग की प्राप्ति के लिये यज्ञादिक को करते हैं, यज्ञ से स्वर्गको जाता है स्वर्ग से मनुष्य लोक, मनुष्य ऐसे चक्र में घूमते हैं। कोई देवताओं के प्रसन्न करने के लिये यज्ञादिक करते हैं, देवता प्रसन्न होकर जल वर्षाते हैं, जल से अन्न की वृद्धि होती है, अन्न को फिर यज्ञ द्वारा देवताओं को समर्पण करते हैं, यज्ञ से देवताओं की प्रसन्नता, प्रसन्नता से अन्न फिर अन्न से यज्ञ इसी चक्र में पड़े हैं। कोई अपनी कामना की पूर्ति करने के लिये देवताओं की उपासना कर रहे हैं, उपासना करके देवताओं की प्रसन्नतासे वर प्राप्त कर भोग करते हैं भोग की समाप्ति में आगे भोग की कामना फिर उपसना करते हैं, इसी प्रकार उपासना से देवकी प्रसन्नता, प्रसन्नता से वर की प्राप्ति वर से भोग, भोग से फिर कामना इसी प्रकार के प्रवाह में बहरहे हैं। कोई कुटुम्ब में ही प्रेम करके आसक्ति से अनेक प्रकार के शुभाशुभ कर्म करके सुख दुःख को प्राप्त होते हुए भी कुटुम्ब को प्रसन्न करने में ही लगे रहते हैं! कोई शरीर को ही आत्मा मान कर शरीर सुख प्राप्ति के लिये अनेक पाप कर के दुःख को पाते हैं। कोई अपनी कामना को पूर्ण करने के लिये मारण, मोहन, उच्चाटन और वशीकरण मंत्रों के प्रयोग द्वारा दूसरों को दुःख पहुंचा रहे हैं। कोई अपने सुखके निमित्त दूसरों का छल करके धन हरण करते हैं। कोई अपने सुख के निमित्त पुण्य

दानादि करते हैं। कोई गोशाला धर्मशाला घाट बना कर अपना अपना नाम कर रहे हैं, कोई अंहकार के वश हो ईश्वर को न मान कर अपने को ही ईश्वर मानते हैं, बलवान, सुखी अपने सदृश किसी को नहीं जानते और कोई मरण के पश्चात् लौट कर नहीं आता, संसार के आनन्द लेना ही मनुष्य का कर्त्तव्य है, ईश्वर के मानने वाले धूर्त्त हैं, क्या ईश्वर किसी ने देखा है ऐसे भावसे अधर्म में पवृत्त होते हैं। यह भी जगत् के पूवाह में पड़े हैं। कोई ईश्वर को पृथक् मान कर फल का देने वाला जान शुभ कर्मों में पवृत्त होते हैं और उनका फल ईश्वर से चहते हैं, फल लेकर भोग करते हैं फिर भोग के लिये शुभ कर्म करते हैं, कर्म से फल, फल से भोग और भोग से कर्म होता है इस पकार के कर्मचक्र से जगत् पूवाह में पड़े हुए हैं। कोई जगत् पूवाह को नित्य मानते हैं और लोकोन्नति में तन, मन, धनसे तत्पर हैं। कोई अपने सदाचार से जगत् को पसन्न करने की चेष्टा में उद्यत हैं। कोई केवल अपनी ही पसन्नता में मन को लगाये हुए हैं, औरों की पसन्नता का ध्यान ही नहीं देते और पसन्नता को भोगों के सहारे से स्थिर रखने का पयत्न करते हैं। कोई नित्य नैमित्तिक कर्म कर्तव्य मान कर करते हैं, फल की इच्छा से रहित हो अन्तःकरण की शुद्धिके लिये कर्म में पवृत्त हैं। कोई संसार पूवाह को नित्यानित्य मान कर अनेक पकार के विचार में पवृत्त होकर आपस में कलह कर रहे हैं। कोई कोई जगत् के पूवाह के अनुसार चलते हुए पूवाह से अलग होजाने के पयत्न में लगे हुए हैं। कोई माया जीव ईश्वर के विचार में आपस में वाद कर रहे हैं। कोई कहते हैं, यह जगत् पूवाह ईश्वर की माया है, ईश्वर नित्य होने से यह जगत् पूवाह भी नित्य है, इसका आदि अंत नहीं है अनादि है, इसलिये माया जीव और ईश्वर तीनों अनादि हैं; जीव नाना हैं ईश्वर एक है जीव माया के वशवर्ती है, ईश्वर माया को अपने वश में किये हुए है जगत् पूवाह का नियामक है यही सत्य है, वे भी पूवाह में बहे जा रहे हैं। कोई कहते हैं उपरोक्त कथन व्यवहार में ठीक है परमार्थ से नहीं। जिसमें बुद्धि न चले और कुंठित होजावे उसे माया कहते हैं, जैसे इन्द्र जाल। यह मोह रूपी जगत् पूवाह (माया) तीन पकार से दीख पड़ता है १ तुच्छरूप, २ वस्तुरूप, ३ अनिर्वचनीय। १ ज्ञान से शांत हो जाता है इस से तुच्छ है क्योंकि जब तक नहीं जानते तभी तक उसका चमत्कार रहता है 'यह जगत पूवाह माया रूप है, ऐसा जान लेने पर शांत हो जाता है। २ अज्ञानी को वस्तु रूप से देख पड़ता है इससे वस्तु रूप है यानी सत्य है। ३ मुमुक्षु को देख भी पड़ता है और विचार करने से नष्ट होजाता है, अघटित घटना करता है इस से अनिर्वचनीय है। जगत् पूवाह को स्पष्ट देखते हैं परंतु उस का वर्णन करना सामर्थ्य से बाहर है इसलिये माया रूप जगत् पूवाह आश्चर्यमय है।

नास्तिक पत्यक्ष पूमाण में ही केवल लगे हुए अन्नमयकोश स्थूल शरीर को ही आत्मा मानते हैं। लोकायत इन्द्रियों को ही आत्मा मानते हैं, पाण के उपासक पाण को ही आत्मा कहते हैं। कोई ऐसा कहते हैं कि मन ही मनुष्य का बंध और मोक्ष का कारण है, इसलिये मनोमय कोश आत्मा है क्षणिक विज्ञानवादी 'विज्ञान यानी बुद्धि को आत्मा कहते हैं। शून्यवादी आत्मा को शून्य बतलाते हैं। कोई आनंदमय कोश को ही आत्मा वर्णन करते हैं। अणुवादी

आत्मा को अणु, महानवादी महान, मध्यमवादी आत्मा को मध्यम कहते हैं ! कोई आत्मा को चेतन कोई अचेतन कोई ज्ञान गुण वाला और कोई असंग मानते हैं। यह सब जगत् प्रवाह में बह रहे हैं।

कुल्हाड़ा से लगा कर काष्ठ, मिट्टी पत्थर, जल, तिनुका, धान, जौ, आम्र बरगद, पीपल, पक्षी मृग, घोड़ा, गौ, शूद्र, वैश्य, क्षत्रिय, ब्राह्मण, राक्षस, यक्ष, मैराल, भैरव, गणेश, अग्नि, इन्द्र, शिव, विष्णु, ब्रह्मा, विराट्, सूत्रात्मा और ईश्वर तक सभी को ईश्वर मानने वाले हैं। मनुष्य जिस जिस कामना से जिस तिस की पूजा करता है उसके सदृश ही न्यूनाधिक फल उसे मिलता है, यह सब जगत् प्रवाह ही है। ऐसा जान कर कोई जगत् प्रवाह से दुःखी होकर इस से निकलने का प्रयत्न करते हैं सब जगत् प्रवाह में ही पड़े हैं। कहां तक वर्णन करें अनिर्वचनीय का निर्वचन होना अशक्य है। जगत् प्रवाह से निकलने का प्रयत्न करने वाले उपरोक्त कथन से संतुष्ट होकर इस प्रवाह के पार जाने के लिये ईश्वर भक्ति में तत्पर होंगे, क्योंकि इस अपार संसार समुद्र से पार जाने के लिये विश्वेश पादाम्बुज ही दीर्घ नौका है। जैसे विना जाग्रत हुए किसी का भी स्वप्न दूर नहीं होता, तैसे ही ईश्वर तत्त्व के जाने विना यह संसार रूपी भ्रम दूर नहीं हो सकता।

माया और जीव ईश्वर तत्त्व में कल्पित हैं, वास्तव में ये हैं ही नहीं, सच तो केवल अद्वैत ईश्वर तत्त्व ही है, यह समस्त दृश्य ईश्वर का स्वरूप है क्योंकि ईश्वर सर्व व्यापक है। वेदकी श्रुति कहती है

"ईशा वास्य मिदं सर्वं यत्किं च जगत्यांजगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।"

अर्थः जो कुछ जगत् में नाम रूपात्मक है सो यह सब ईश्वर से आच्छादित है तिससे यानी जगत् से पृथक् होकर के अपने आत्मा की रक्षा करे और किसी के भी विषय भोग रूप धन की आकांक्षा न करे।

मैं एक से बहुत होऊं ऐसी इच्छा से लेकर प्रकृति में प्रवेश पर्यंत सृष्टि ईश्वर द्वारा कल्पित हुई है और जाग्रत अवस्था से लेकर मोक्ष पर्यंत तक सृष्टि का व्यवहार जीव द्वारा कल्पित हुआ है इस प्रकार यथार्थ न जानने वाले जगत् प्रवाह से कभी नहीं बच सक्ते।

तिनुकाके पूजने वालों से लेकर योगाभ्यास करने वालों तक ईश्वर में सब का भ्रम है और लोकायत मत से लेकर सांख्य मत वाले तक जीव में भ्रम करते हैं। ये सब भाव वाले मनुष्य ठीक ठीक ईश्वर तत्व को नहीं जानते, ईश्वर और जीव में भ्रम किया करते हैं। भ्रम में पड़े हुए मनुष्य इस जगत् प्रवाह से कभी नहीं बच सकते। इनको सब जगत् प्रवाह में पड़े हुए जान कर श्रेयोत्सक पुरुषों को चाहिये कि तन मन धन से सद्गुरु की शरण हो ईश्वर तत्व को जान कर ईश्वर की शरण होना चाहिये। जगत् रूप प्रवाह में से बचने को केवल ईश्वर शरण के सिवाय और कोई उपाय नहीं है।

कुण्डलिया

नैया मेरी पार करि, हे जग खेवनहार।
विनय करूं कर जोड़ करि, आय फंसी मझधार॥
आय फंसी मझधार, काम के चक्कर जारी।
लोभ मोह हंकार, भवँर देते दुख भारी॥

कहता आत्मानंद, सुनो हो आप खिवैया।
कर दो जल्दी पार, डूबती मेरी नैया ॥ १ ॥

ईश्वर देर न कीजिये, केवट है मतवार।
आंधी चलत प्रचंड अति, टूट गई पतवार ॥
टूट गई पतवार, तो पवित्र नहीं सहारा।
मातु पिता सुत दार, करि गये सभी किनारा ॥
कहता आत्मानंद, सुनो हो हे भुवनेश्वर।
शीघ्र हि कर दो पार, मेरी नौका को ईश्वर ॥ २

डेरा रहन न पायगा, जब आवे जमराज।
अबहूं आंखें खोलले, क्यों बनता शठराज ॥
क्यों बनता शठराज, भक्ति ईश्वर की कीजै।
जग से मुख को मोड़, प्रेम हरिसे करि लीजै ॥
आत्मानन्द सहाय, ईश बिनु कोई न तेरा।
आवे इक दिन काल, छोड़ना आखिर डेरा ॥ ३ ॥

निश्चय मनत् जानले, चलना विश्वे बीस।
चलना है रहना नहीं, क्यों करवावे खीस ॥
क्यों करवावे खीस, ईश को क्यों नहि भजता।
जो जग का रखवार, भक्ति उसकी नहिं करता ॥
तज जग की सब प्रीति, ईश से करले परिचय।
बेड़ा होवे पार, ईश भजि मन तू निश्चय ॥ ४

तीन मार्ग

[ले० श्री० मधुमंगल जी मिश्र]

किसी स्थान को जाने को दो वा अनेक मार्ग हो सकते हैं। कोई समीप होता है और कोई दूर होता है। परिधि से केन्द्र पर जाने के अनेक मार्ग हो सकते हैं और प्रत्येक मार्ग सीधी दिशा में समीपतम होता है। वैसे ही ईश्वर प्राप्ति के कतिपय मार्ग हो सकते हैं। हमारे हिन्दू धर्म शास्त्रों में तीन मार्ग बताये हैं। रामायण में गोसाईंजी ने उन मार्गों का उल्लेख किया है और अपनी रुचि के अनुसार भक्ति मार्ग की प्रधानता वा सुकरता बताई है। उत्तरकाण्ड के ज्ञान दीपक के विवरण में कुछ विस्तार भी किया है। हमारे हृदय में हृदयङ्गम करने वाले कुछ कथाओं व्याख्यानों में सुने तथा मनन किये हुए उदाहरण सहायक हुए हैं। उन्हीं उदाहरणों को दूसरों के भी सहायक होवें इस भाव से प्रेरित हो ये पंक्तियां लिखता हूं।

बहुत दिनों की बात है। मैं छात्रावस्था में प्रयाग में निवास करता था किसी नवागत महात्मा के व्याख्यान का विज्ञापन मिला। मैं भी गया। महात्मा जी ने बहुत अच्छा व्याख्यान दिया। अब तो उसका कुछ भी स्मरण नहीं है! पर एक उपयुक्त हृदयङ्गम उदाहरण नहीं भूला हूं। महात्मा जी ने उदाहरण को कथा के स्वरूप में प्रारम्भ किया। उसका भाव ऐसा कुछ था।

एक दिन शहर में मेला था। लोगों की भीड़ अच्छे २ कपड़े पहिने, द्वार पर से जाते देख घर के बालकों ने पिता से पूछा। बाबू जी! आज लोग कहां जारहे हैं? उत्तर मिला आज अमुक मेला है। बच्चों ने कहा बाबू जी हमें भी ले चलो बाबू जी ने फटकार दिया तुम कहां जाओगे? बालक उन की मुद्रा देख खिसक गये। और जन समुदाय जाते ही देख बाबा के पास पहुंचे और बोले बाबा हमें मेले में ले चलो। बाबा वृद्ध थे। अपनी वय में मेले देख चुके थे। न उन्हें श्रद्धा थी न उत्साह। न शरीर में

सामर्थ्य था। कि धक्के खावें उन्होंने उत्तर दिया कि वहां बड़ी भीड़ होगी गाड़ी, तांगे, इक्के, बग्घी, फिटन, घोड़े आते जाते होंगे। तुम वहां कहां जाओगे? दब जाओगे। पर बढ़ती संख्या में सज धज के जाते लोगों को देख बालकों का मन न माना। फिर बाबा के पास गये गिड़गिड़ाये, बाबा ने कहा हमें अंगा सिलाना पड़ेगा। छड़ी खोजनी पड़ेगी जाओ बाबूजी से कहो। पर बालकों का साहस न हुआ। कुछ समय पश्चात् बाबू जी स्वयं उठे कपड़े पहिने और मेला देखने चले। बालकों ने विनती की अब की बार डांट पड़ी। मैं भीड़में किसका किसका हाथ पकड़ूंगा! कहीं भीड़ में खोगये तो? चलो, हटो, बैठो। बालक फिर खिसक गये। मनही मन रोने लगे पर कुछ बोले नहीं। बाबू जी को बाबा से सहायता वा आज्ञा लेने की आवश्यकता न थी। वे अपना जी बहलाने चले गये। पर बच्चों को भी मेला देखने की अभिलाषा होगी इसका तनिक भी विचार न किया। बच्चे बाबा के पास गये। बाबा ने अनेक कारण बताये पर वे आग्रह करते ही गये गोद में चढ गये। उनकी पुस्तक बन्द कर दी रोने लगे। बाबा के अस्वीकार करने पर भी बच्चे अड़े ही रहे। बाबू के अस्वीकार करने पर चूं भी न किये थे। अन्त में बूढ़े बाबा को न चाहते हुए भी कपड़े पहिन लाठी टेकते उंगली पकड़े मेले में जाना ही पड़ा। भीड़ में उनकी क्या दशा हुई होगी? इससे हमारा कुछ तात्पर्य नहीं है हमारी कथा होगई। बाबू जी ज्ञानी थे। बालक भक्त थे। बाबा को ईश्वर के समान मानेंगे। बाबूजी को बाबा की आवश्यकता न थी। वे अपने पैर खड़े हो सकते थे। उनकी इच्छा हुई वे उठकर चले गये। बालकों को दुरदुरा दिया, बच्चे उनसे सहायता न पासके। उनमें सामर्थ्य था। पर बालकों के किस काम का? बूढ़े बाबा को न तो रुचि थी न सामर्थ्य। पर फिर भी बालकों की दीनता निस्सहायता, बाबूजी की झिड़क आदि ने बाबाके न चाहते भी बालकों के करुण क्रन्दन ने चलने पर बाधित किया। बालक के समान दीनता पूर्वक ईश्वर की सहायता मांगना भक्ति-मार्ग है। और अपने कर्मों द्वारा उन्हीं पर भरोसा कर निरपेक्षभाव से बाबा के समान ईश्वर को केवल बड़ा मानना ज्ञान मार्ग है।

एक और उदाहरण है। पिता को अजीर्ण हुआ है। बिना भोजन किये काम पर से लौटे हैं। द्वारकी सिकड़ी खट खटाते ही तीन चार लड़के दौड़ आते हैं। बड़ा पूछता है बाबूजी कैसाजी है? दूसरा दौड़ के खड़ाऊं लाया। तीसरे ने घड़ी और टोपी थामली। चौथे ने पंखा झलना प्रारम्भ किया। दूसरे ने बिछौना बिछा दिया। तीसरे ने कपड़े लेकर खूंटी पर टांगे। पहिले ने मोजे खींच लिये, तीसरा हाथ मुंह धोने को पानी लाया। पहिले ने पूछा कुछ फल लावें? जामुन खाओगे? पंखे वाले ने बूका नमक मंगाया पिता ने देखा बालक जानते हैं कि उपवास किये हैं। थके दीखते हैं, यही हमारी सहायता का अवसर है जिससे जो बनपड़ा उसने वह किया। भूखे श्रान्त पिता को विश्राम मिला। पास ही के कमरे में बड़े चिरंजीव भैया जी चिक डाले पड़े थे। उनने आवश्यक न समझा कि चलें कुछ पूछें जानते थे यह तो साधारण सी बात है। अजीर्ण हुआ ही करता है। भूखे रहने से शान्त होता है। पंखा झलना वा घड़ी थामना कुछ उनका काम नहीं है। सांझ को भेंट हुई कहा आपके दांत गिर गये हैं इसी से अजीर्ण होता है। दांत बनवा डालिये। वायु सेवन

नित्य नियम पूर्वक करना चाहिये। इत्यादि, इत्यादि।

बड़े भैया ज्ञानी के समान थे। उन्होंने युक्ति की दो एक बातें कह दी। पिता मानें तो ठीक न मानें तब भी वे तटस्थ हैं। छोटे लड़कों को ये बुद्धि की बातें नहीं सूझीं। वे पिता को भक्ति पूर्वक प्यार करते हैं। जूते खोल देना, पंखा झलना, बिछौना बिछा देना उनका काम है इसमें उन्हें लज्जा नहीं। वे जानते हैं कपड़े उतार कर लेटने में, पंखे की वायु से विश्राम पाने में, तथा जामुनसा हलका फल खाने में पिता जी को आराम मिलेगा और कुछ क्षुधा शान्ति होगी। यह भक्ति मार्ग हुआ।

एक तीसरा उदाहरण मेरे पूज्य पिताजी कथा कहते समय दिया करते थे। मान लो एक नदी पार करना है। योगी के समान नदी पार करने वाले उस पर पुल बनवा देंगे जिससे न केवल वह आपही वरन सभी कोई पार जा सकेंगे। अथवा योगी सामर्थ्य-शाली होता है वह पूरा तो नहीं पर प्रायः ईश्वर के समान होता है। वह चाहे तो नदी ही को सुखा दे वा धारा पलट दे। जिस मनुष्य में योगी के इतना सामर्थ्य नहीं है वह ज्ञानी के समान अपने पराक्रम से तैर कर नदी पार करेगा। यदि मगर आदि जल जन्तु का भय होगा तो शरीर में हलदी तेल चुपड़ लेगा जिससे वे गन्ध के कारण पास ही न आवें।

नदी पार करने का तीसरा उपाय नाव है। यह भक्ति मार्ग के समान है। जिस में अपना पौरुष वा पराक्रम नहीं है, वह मल्लाह के भरोसे बिना सामर्थ्य व संकट के नदी पार करता है। उसे चिंता नहीं है लहरें उठेंगी भंवरें पड़ेंगी तो मल्लाह संभालेगा:—

जहाजों में तो खैरसल्लाह है।
अमन चैन! अल्लाह मल्लाह है॥
मन मोहन प्यारे सांवरिया।
मेरी पार लगा दे नावरिया।
गुनी गनी (योगी, ज्ञानी) सब पार उतरिगे,
निर्गुनिया परे भांवरिया।

सीता पति रघुनाथ जी तुम लगि मेरी दौर।
जैसे काग जहाज को सूझत और न ठौर॥
कामिहि नारि पियारि जिमि लोभिहि जिमि प्रिय दाम।
तिमि गरीब के देह पर मात पूत को पाम।
ऐसे है कब लागि हौं तुलसी के मन राम।

गीता प्रेमी विद्वानों से निवेदन

(१) गीता अध्याय १५ मंत्र ४ में 'तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये' ऐसा पाठ है, इस मंत्रके पदों की संगति नहीं, कुछ ऊपर से मिला कर सब ने लगाया है। यदि 'तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्य' ऐसा पाठ हो तो २।३।४ मन्त्र साथ लग जांयगे। अथवा यदि यही पाठ है, तो 'प्रपद्य + इ' ऐसा छेद करके सब लगाया जावे तो भी ठीक हो जायगा।

(२) अध्याय १५ मन्त्र ७ में 'ममैवांशो जीव लोके जीवभूत: सनातन:' ऐसा पाठ है। यहां यातो 'अजीव लोके' ऐसा छेदकर यह अर्थ किया जाय कि 'जब संसार में कोई जीव न था, तब मेरा ही अंश जीव भाव को प्राप्त होगया, या 'ममैवांशो जीव लोके बीजभूत: सनातन:' ऐसा पाठ रहे तो ठीक जान पड़ता है, जैसाकि 'बीजं मां सर्व भूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्' ॥१०॥

पण्डित गण विचार कर भक्ति पत्र में उत्तर छपावें।

बाबूराम शुक्ल

श्रीकृष्ण जयन्ति

[ले० श्री० शिरोमणी मथुराप्रसादजी]

बधाई है बधाई है, प्रियपाठक गण ! श्री कृष्ण जन्म स्मारक शुभ तिथि भाद्रपद कृष्ण अष्टमी प्राप्त हुई बधाई है आहा ! इस पवित्र मास, तिथि वार से अधिक मंगलकारी सर्व संकटहारी और कौनसा मास तिथि वार तथा नक्षत्र होसकता है। जिसमें हमारे प्राणप्यारे, जन रखवारे श्री नंदनंदन व्रजदुलारे का जन्म इस परम हर्षास्पद भारत वर्ष के प्रधान प्रदेश व्रज मंडल सुदेश में हुआ है।

(पद) रागिनी कानड़ा

गाओ आज आनन्द बधाई–
जो दुर्लभ सुर मुनि योगिन को,
सो निधि सुलभ जसोमत पाई ॥ १ ॥
हरि प्रघटे श्री नंद महिर घर।
सकल चराचर मन हरषाई ॥ २ ॥
झुंड झुंड सखियाँ सुनि शोभा।
पुनि पुनि छवि निरखन को धाई ॥ ३ ॥
उच्छव तीन लोक में छायो।
शोक धरी असुरन को आई ॥ ४ ॥
श्रुति जिह नेतिनेति कर खोजत।
ताहि जसोमत गोद खिलाई ॥ ५ ॥
आस लगी इन ही दर्शन की।
मथुरा दास की प्यास बुझाई ॥ ६ ॥

अजन्मा का जन्म कैसे और क्यों हुआ-यह प्रश्न उपस्थित होता है इस का उत्तर भगवान् ने स्वयं ही श्रीमुख से दिया है।

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्म मायया ॥

मैं अजन्मा और सब प्राणियों का ईश्वर स्वामी होने पर भी अपनी प्रकृति-माया को आश्रित करके अपनी शक्ति (माया) के साथ अपने आप प्रकट होजाता हूं। मैं क्यों जन्म लेता हूं और कब लेता हूं इस विषय में भगवान् कहते हैं।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानि र्भवतिभारत
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥

जब जब धर्म नष्ट होने लगता और अधर्म (पाप) बढने लगता है तब तब मैं साधुओं की रक्षा और दुष्टों को दंड देने के लिये युग युग में प्रकट होजाता हूं

प्रश्न-क्या भगवान् सर्व साधारण प्राणियों की भान्ति देवकी माता के गर्भ में आये? क्या उनका जन्म सर्व साधारण जीवधारियों के समान हुआ?

उत्तर यों तो वो कहां नहीं है। कोई स्थान ऐसा नहीं जहां वो न हों, तो गर्भमें क्या पहले न थे? यदि पहिले न होते तो आना जाना संभव था, दूसरे जहां पर उनका गर्भ में आना और जन्म लेना आपने श्रवण किया है वहां इस प्रकार लेख है।

भगवानपि विश्वात्मा भक्तानामभयंकरः।
आविवेशांशभागेन मनआनकदुंदुभेः ॥

सारे संसार की आत्मा और भक्तों को निर्भय करने वाले भगवान् भी वसुदेव जी के मन में आये।

इससे स्पष्ट होगया कि अन्न से वीर्य बन कर जैसे सब जीव गर्भ में आते हैं वैसे भगवान् गर्भ में नहीं आये पहिले पिताको गर्भ रहता है फिर माता के

बदर में आता है उस प्रकार यहां प्रथम वसुदेव जी के हृदय में आये क्या ? उनको अपने मन में प्रतीति मात्र हुई कि कोई विशेष तेज उनके अन्तःकरण में प्रविष्ट हुआ है, उसी रीति से देवकी माता के पेट में जान पड़ा।

तदा जगन्मंगलमच्युतांशं समाहितं शूर सुतेन देवी।
दधार सर्वात्मकमात्ममूतं काष्ठायथाऽऽनंद करंमनस्तः॥

जैसे पूर्व दिशा चंद्रमा को धारण करती है उसी प्रकार देवकी जी के मन में धारण हुवे, और प्रकट भी ऐसे ही हुवे जैसे पूर्व दिशा से चंद्रमा निकलता है।

आविरासीद्यथा प्राच्यां दिशीन्दुरिव पुष्कलः॥

इन वचनों से सिद्ध होगया कि न भगवान् पंच भौतिक शरीर धारण कर गर्भ में आये और न उस भांति उत्पन्न हुवे। इसके उपरान्त जरा गौर कीजिये कि माता के पेट में इतना अवकाश क्योंकर हो सकता है कि शंख चक्र गदा पद्म हथियारों को लिये हुवे चार भुजाधारी शरीर रह सके:-

उसके उपरान्त की कृष्ण भगवान् ने प्रकट होते ही अपनी माता तथा पिताको उपदेश किया। भौतिक शरीर से ऐसा कदापि संभव नहीं हो सकता। ब्रज वासी इस प्रकार बधाई देते हैं:?

(बधाई का पद)

यह निध केहि विध पाई री जसोधा, यह निध कैसे पाई॥
जाकी स्वास रमा सी दासी सो तव सुत भयो माई।
ले तन बनो भेद वेदन सब नेतिनेति श्रुति गाई।
अज बाकी पद रज को वन्दै नन्दै देत बधाई॥
भादों कृष्ण अष्टमी शुभ तिथि निस अन्धियारी छाई।
प्रकट भये झट ही नट नागर द्युति रवि कोटि सुहाई॥
गोकुल विच न रखो कुल कोऊ जहां न बजत बधाई।
अंक अंक जन मिलें रंक तज रंक मानो धन पाई॥
नंद भवन आनंद महोदधि रह्यो अधिक लहराई।
झुंड झुंड ब्रज वनिता धावें गावें करत नचाई॥
सुर दल भेष बदल चल धाये छवि लख बल बल जाई।
श्री मथुरेश वदन सोभा पर कोटिन मदन लजाई॥

प्रेम विवरण

[ले० एक भिक्षु]

परं प्रेम स्वरूपाय जगदानन्ददायिने।
कृष्णाय वासुदेवाय सर्वात्मने नमो नमः॥

एक मुमुक्षु ने एक दिन एक संत से इस प्रकार प्रश्न किया:-

मुमुक्षुः-महाराज! आप भीष्म और शुकदेव की भान्ति सकल शास्त्रोंके पूर्ण ज्ञाता हैं। जिस प्रकार दिवाकर उदय होते ही महान् से महान् तिमिर को नष्ट कर देता है इसी प्रकार आप प्रत्येक प्राणी की बड़ी से बड़ी शंका निवृत्त कर देते हैं; कृपया मेरी निम्न लिखित शंका का समाधान कर दीजिये:-

शंका:-संसार में मनुष्य की परमावधि आत्म-पद की प्राप्ति ही शास्त्र में-वेद में कही है। निष्काम कर्म और भक्ति आत्म प्राप्ति के साधन माने हैं। उन की भी अनेक शाखायें और भेद हैं। प्रेम भी भक्ति का एक मुख्य अंग है। प्रायः सभी प्राणी सहज में

ही प्रेम के वश हो सक्ते हैं परन्तु प्रेम के रहस्य को न जान कर अधिकतर मोह रूप अंध कूप में गिरते हुये ही देखने में आये हैं इसलिये आप प्रेमका पूरा २ विवरण करके समझाइये !

संत:-भाई न तो मैं भीष्म हूं, न शुकदेव हूं, मैं तो सकल चराचरानुचर हूं, यानी सब के पीछे खड़ा होने वाला हूं ! जब तक मैं सब के आगे खड़ा होता रहा तब तक सब के धक्के खाता रहा ! जब से मैंने आगे खड़े होना छोड़ दिया है, सब से पीछे खड़े होने लग गया हूं, तब से बड़े आराम में हूं ! सब झंझटों से छुट गया हूं, न कोई धक्का देता है, न अपशब्द कहता है न कोई मुझ से वाद विवाद करता है ! सब के परस्पर वाद विवाद का तमाशा देखता रहता हूं, इसलिये भाई मेरी तो चैन से गुजरती है : 'न ऊधो का लैन न माधो का दैन' ! सदा प्रसन्न रहता हूं ! सच कहा है:-

ज्ञात्वा वयं तत्वनिष्ठां ननु मोदामहे वयम् ।
अनुशोचाम एवाऽन्यान्न भ्रान्तैर्विवदामहे ॥

अर्थात् हम तत्व निष्ठा को जान कर निश्चय आनन्द करते हैं, भ्रान्त पुरुषों का शोच ही करते हैं, उनके साथ वाद विवाद नहीं करते । भाई यह ही मेरा भी हाल है, किसी के साथ वाद विवाद का काम ही नहीं है ! मैं हारा और सब जीते ऐसा मेरा मत है ! शंका करने वाले और समाधान करने वाले अंतर्यामी भगवान् हैं भगवान् ने तेरी बुद्धिको प्रेरणा करके शंका उठाई है और वे ही मेरी बुद्धिको प्रेरणा करके शंका का समाधान कर देंगे । गीता में उनका वचन है ही:-

सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च ।

अर्थात् मैं परमात्मादेव ही सर्व प्राणियों की बुद्धि में प्रविष्ट हुआ हूं, मुझ परमात्मादेव से ही सब प्राणियों को स्मृति, ज्ञान तथा स्मृति ज्ञान का अभाव रूप अपमोहन प्राप्त होता है । भाई ! भगवान् बड़े दयालु हैं, सर्वदा सब के साथ हैं, परम प्रेमास्पद हैं ! भगवान् में आस्था न होने से ही सब मोह रूप अन्ध कूप में गिरते हैं ! भगवान् को न जानने से ही सब शंकायें उठती हैं, भगवान् को जानते ही सब शंकायें निवृत्त हो जाती हैं ! भगवान् को न जानने से ही सब झगड़े हैं ! भगवान् सब के आत्मा हैं, आत्मा अपने आपको कहते हैं, भगवान् को जानते ही सब अपने हो जाते हैं ! गैर में-अन्य में ही झगड़ा होता है ! अपने में किसी को राग द्वेष नहीं होता ! इस से सिद्धहुआ कि भगवान् का न जानना ही सब अनर्थों का मूल है ! भगवान् करें सब की आंखें खुल जांय और सब भगवान् को प्रत्यक्ष देखने लगें और अखंड शान्ति को प्राप्त हों !

अच्छा ! अब अपनी शंका का उत्तर सुन ! तू कहता है कि संसार में मनुष्य की परमावधि आत्मपद की प्राप्ति है, यह तेरा कथन ठीक नहीं है ! संसार में तो धन की प्राप्ति ही परमावधि है ! संसारियों का तो धन ही ईश्वर है ! कहा भी है:-

माया तेरे तीन नाम । परसा, परसी परसराम ॥

और भी कहावत है:-

नहिं बहिन बड़ी नहिं भैया,
नहिं बाप बड़ा नहीं मैया, सब से बड़ा रुपैया !

सो भाई संसार में तो धन वाले ही की पूछ है, निर्धन को कोई नहीं पूछता ! चार पैसेवाले को लोग हजूर २ कहते हैं, बिना पैसे वाले से घर के भी दूर दूर रहते हैं ! वेद में भी संसारियों के लिये तो धर्म ही बताया है, धर्म से ही धन की प्राप्ति होती है

और धन से संसार का सुख प्राप्त होता है। आज कल तो बहुत से लोगों की धर्म में भी श्रद्धा नहीं है, श्रद्धा ही नहीं, आज कल के नई रोशनी के जेन्टिलमैन तो धर्म को अवनति का कारण मानने लगे हैं! धर्म से लोक परलोक दोनों में सुख की प्राप्ति होती है, अंतःकरण शुद्ध होता है परन्तु जो वेद को ब्राह्मणों के गपोड़े मानें, उनके लिये तो धर्म मात्र कहानी है और आत्मपद वंध्या का पुत्र है!

मुमुक्षुः महाराज! धर्म क्या है?

संतः-भाई! जो सब लोकों को धारण करे, उसका नाम धर्म है। शुभ अदृष्ट पुण्य और श्रेय, यह भी धर्म के नाम हैं। धर्म दीपिका में कहा है:-वेद विहित क्रिया से सिद्ध होने वाले गुण धर्म हैं और वेद निषिद्ध क्रिया से सिद्ध होने वाले गुण अधर्म हैं। सत्य से धर्म उत्पन्न होता है, दान से धर्म बढ़ता है, क्षमा से धर्म ठहरता है और क्रोध से धर्म नष्ट होता है। कणाद ऋषि कहते हैं:-

यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः।

अर्थात् जिससे अभ्युदय रूप लोकसुख और निःश्रेयस रूप मोक्ष दोनों की सिद्धि हो, वह धर्म है जैमिनि कहते हैं:-

चोदना लक्षणार्थो धर्मः

अर्थात् विधि लक्षण वाला अर्थ धर्म है। मत्स्य पुराण में कहा है:-

अद्रोहश्चाप्यलोभश्च दमो भूतदया तपः।
ब्रह्मचर्यं ततः सत्यमनुक्रोशः क्षमा धृतिः।
सनातनस्य धर्मस्य मूलमेतद्दुरासदम्॥

अर्थात् द्रोह न करना, लोभ न होना, इन्द्रियों का दमन, जीवों पर दया करना, तप, ब्रह्मचर्य, सत्य करुणा, क्षमा और धैर्य ये सनातन धर्म का मजबूत मूल है। पाद्मोत्तरखंड में कहा है:-

पात्रे दानं मतिः कृष्णे मातापित्रोश्च पूजनम्।
श्रद्धा बलिर्गवां ग्रासः षड्विधं धर्मलक्षणम्॥

अर्थात् पात्र को दान देना ईश्वर में आस्था रखनी, माता पिता का पूजन करना श्रद्धा, बलि और गोग्रास, यह छै प्रकार के धर्म के लक्षण हैं। पाद्म-भूमिखंड में कहा है:-

ब्रह्मचर्येण सत्येन तपसा च प्रवर्तते।
दानेन नियमेनापि क्षमा शौचेन वल्लभ॥
अहिंसया सुशान्त्या च अस्तेयेनापि वर्तते।
एतैर्दशभिरङ्गैस्तु धर्ममेव प्रसूचयेत्॥

अर्थात् हे प्रिय! ब्रह्मचर्य सत्य, तप, दान, नियम, क्षमा, शौच अहिंसा, शान्ति से बर्ते, चोरी न करे, इन दश अंगों से धर्म की सूचना देवे। महाभारत में कहा है: 'अहिंसालक्षणो धर्मो हिंसा चाधर्म लक्षणः' अर्थात् धर्म अहिंसा लक्षण वाला है और हिंसा अधर्म का लक्षण है। भागवत में कहा है:-'वेद प्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद् विपर्ययः' अर्थात् धर्म वेद विहित है और इससे विपरीत अधर्म है। मनुसंहिता में कहा है:-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

अर्थात् धैर्य, क्षमा, शम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य, और अक्रोध ये दश धर्म के लक्षण हैं। हे भाई! सीधे शब्दों में सदाचार शिष्टाचार का नाम धर्म है। धर्मतत्व के जानने वालों का कथन है कि भगवन् के पास से भी पास ले जाने वाला धर्म है और भगवन् से दूर से भी दूर ले जाने वाला अधर्म है। सकाम धर्म सांसारिक सुख का हेतु है और निष्काम धर्म मोक्ष

का साधन है। संसारियों के लिये तो सकाम धर्म ही वेद में बताया है क्योंकि संसारी लोग संसार का सुख ही चाहते हैं। लौकिक संसारी सुख भी शास्त्र संस्कार वाले पुरुष ही धर्म द्वारा उपार्जन करते हैं और शास्त्र नेत्र हीन पुरुष तो न धर्म मानते हैं और न ईश्वर मानते हैं क्योंकि धर्म और ईश्वर को देखने के नेत्र ही उनके पास नहीं है! भाई! ऐसे पुरुष तो अवश्य अंधकूप में गिरेंगे ही! अभ्युदय रूप लौकिक उन्नति और निःश्रेयस रूप मोक्ष के लिये शास्त्र ही सोपान रूप है, इसलिये कल्याण की इच्छा वाले को शास्त्र का अवलम्बन अवश्य लेना चाहिये। शास्त्रानुसार वर्ते विना किसी प्रकार का भी सुख नहीं मिलसक्ता!

हां! संसार से मुक्त होने की इच्छा वालों के लिये वेद में आत्मज्ञ की प्राप्ति को परमावधि कहा है। सजातीय वस्तु को सजातीय वस्तु ही ग्रहण कर सक्ती है, यह नियम है। जैसे रूप तन्मात्रा का बना हुआ नेत्र रूपको ग्रहण करता है। शब्दतन्मात्रा का बना हुआ श्रोत्र शब्दको, स्पर्शतन्मात्रा की त्वचा स्पर्श को, रसतन्मात्रा की रसना रसको और गंध तन्मात्रा की बनी हुई नासिका गंध को ग्रहण करती है, आत्मा सत् चित् तथा आनन्द स्वरूप है इसलिये आत्मा की प्राप्ति के लिये सदाचार, ज्ञान और भक्ति ये तीन उपाय शास्त्र में बताये हैं। आत्मा सत्य होने से असत्य की इच्छा नहीं करता इसलिये वेगरज़ है। वेगरज़ को प्राप्त करने का उपाय वेगरज़ होना है इस लिये निष्काम कर्म करना, शास्त्र में आत्म प्राप्ति का उपाय बताया है। आत्मा चित् है इस लिये आत्मा की प्राप्ति का उपाय ज्ञान है। आत्मा आनन्द रूप यानी प्रेम रूप है इसलिये प्रेम आत्मप्राप्ति का उपाय है। निष्काम कर्म, ज्ञान और भक्ति यानी प्रेम इन तीनों में भी प्रेम मुख्य है क्योंकि किसी वस्तु का होना हमको मालूम हो, और वह वस्तु कैसा और कहां है, यह ज्ञान भी हो, फिर भी यदि हममें प्रेम नहीं है तो हम उसकी प्राप्ति का यत्न नहीं करते इससे सिद्ध है कि वस्तु की प्राप्ति में प्रेम ही मुख्य कारण है। सब अपने को "हैं" कहते हैं 'नहीं है' कोई नहीं कहता इस लिये आत्मा सत् है। सब अपने को कुछ न कुछ जानते हैं, यानी सब में ज्ञान है इस लिये आत्मा चित् है। सब अपने को प्यार करते हैं, कोई ऐसा नहीं है, जो अपने को प्यार न करता हो, इस लिये आत्मा आनन्दस्वरूप है। इस प्रकार आत्मा का सच्चिदानन्द होना सब के अनुभव सिद्ध है और श्रुति भी आत्मा को सच्चिदानन्द रूप कहती है इसलिये आत्मा सच्चिदानन्द रूप है, यह सिद्ध हुआ आत्मा काल का भी काल होने से सत्य का भी सत्य परम सत्य है ज्ञान रूप बुद्धि का ज्ञाता होने से ज्ञान का भी ज्ञान परम ज्ञान है और प्राणादिक से भी प्यारा होने से प्रिय का प्रिय परम प्रिय है। आत्मा के परम प्रिय होने में यह युक्ति है। संसारियों को धन प्रिय होता है परंतु जब पुत्र पर कोई आपत्ति आती है तो धन खर्च करके पिता पुत्र की रक्षा करता है इस से सिद्ध होता है कि धन से पुत्र अधिक प्यारा है। जब कभी दुष्काल पड़ जाता है तो पिता माता पुत्र को बेच कर अपनी रक्षा करते हैं अथवा घर में अग्नि लग जाय, पुत्र घरके भीतर हो तो पिता बाहर से पुत्र को बचाने को अग्नि में नहीं जाता, इससे सिद्ध हुआ कि पुत्र के शरीर से अपना शरीर अधिक प्रिय है। यदि किसी अपराध से राजा आदि किसी का हाथ काटा चाहें तो अपराधी बंदी

खाना जाना पसंद करलेगा हाथ कटवाना स्वीकार न करेगा, इस से सिद्ध होता है कि शरीर से कर्मेन्द्रियां अधिक प्रिय हैं। यदि कोई शत्रु किसी के शिर में लाठी मारना चाहता है तो दूसरा पुरुष शिर को हाथ से बचाना चाहता है, यानी शिर में चोट लगने से हाथ में चोट लग जाना अच्छा समझता है इस से सिद्ध होता है कि कर्मेन्द्रियों से ज्ञानेन्द्रियां अधिक प्रिय हैं। यदि किसी अपराधी को फांसी का हुक्म होगया हो और उससे कहा जाय कि तू अपनी एक या दोनों आंखें फुड़वाले फांसी से बरी कर दिया जायगा, तो वह अवश्य खुशी से राजी हो जायगा, इससे सिद्ध होता है कि ज्ञानेन्द्रियों से प्राण अधिक प्यारे हैं। जब मनुष्य, किसी व्याधि से अत्यंत कष्ट पाता है तो प्राण त्यागने तक को तत्पर हो जाता है, इससे सिद्ध होता है कि प्राण से भी आत्मा अधिक प्रिय है। इसीलिये वेदवेत्ताओं ने आत्मा को प्यारे से भी अधिक प्यारा परम प्रेमास्पद कहा है।

भावुक! अब तो तू समझ गया होगा कि प्रेम का क्या स्वरूप है और आत्मा की प्राप्ति में प्रेम ही क्यों मुख्य कारण है? यह भी समझ में आगया होगा कि लोग अंधकूप में क्यों गिरते हैं? भाई! प्रथम तो जो वस्तु प्राप्त करनी हो, उसका यथार्थ स्वरूप जानना चाहिये। यथार्थ स्वरूप जान कर ही वस्तुकी प्राप्ति होगी नहीं तो धक्के ही खाने पड़ेंगे कोई धनको आत्मा मानता है, कोई पुत्रको कोई शरीर को, कोई कर्मेन्द्रियों को, कोई ज्ञानेन्द्रियों को, कोई प्राण को कोई मन को आत्मा मानता है। ये सब अनात्मा हैं, इनके साथ प्रेम करने वाला तो अंधकूप में ही गिरेगा! चोर का संग करेगा, अवश्य जेलखाने जायगा, जुवारी का संग करेगा, जरूर दंड पावेगा, शराबी का संग करके शराब के नशे में मल मूत्र में अवश्य लोटेगा! लोहार की दुकान पर बैठने से अवश्य कपड़ा या खाल जलावेगा, गंधी की दूकान पर बैठने से मस्तिष्क सुगंधित होगा! आत्मा परम प्रेम रूप है इसलिये धन, पुत्र, तन, मन सबमें से आसक्ति हटा कर केवल आत्मा में प्रेम करना होगा, तभी आत्मा की प्राप्ति होना संभव है। भगवान ने बारम्बार गीता में कहा है कि अनन्य भक्त ही मुझे पासक्ता है! भगवान् का वचन अमोघ है। संसार की कामना वाले को करोड़ों जन्म में भी भगवान् के दर्शन नहीं हो सक्ते! राग द्वेष करने वाला कभी भी भगवान् के पास नहीं पहुंच सक्ता। भाई! यदि भगवान् की प्राप्ति चाहता है तो कानों से भगवान् के गुण सुना कर, आंखोंसे सर्वत्र भगवान् के ही दर्शन किया कर, त्वचा से भगवान् का ही स्पर्श किया कर, भगवान् ही स्वाद लेते हैं, भगवान् ही सूंघते हैं, ऐसा समझा कर अथवा उन्हीं के अनुग्रह से मैं चखता, सूंघता हूं, ऐसा समझा कर! पैरों से भगवान् की खोज में जाया कर, हाथों से भगवान् के लिये दान पुण्य किया कर, वाणी से सदा भगवान् के गुण गान किया कर, भगवान् का मंत्र जपा कर, सर्वदा ब्रह्मचर्य का व्रत धारण कर, भगवान् का ध्यान, स्मरण तथा चिन्तवन किया कर! जब तक भगवान् में अनन्य प्रेम नहीं होगा, तब तक भगवान् की प्राप्ति नहीं हो सक्ती अनन्य प्रेम से ही भगवान् की प्राप्ति होती है! भगवान् सब के आत्मा हैं, सब के शरीर में विराजमान हैं! अंतःकरण के साक्षी हैं। बाहर भीतर मौजूद हैं! अनन्य प्रेम करने से प्रकट हो जाते हैं! जैसे चींटी रेतमें मिले हुये शक्करको निकाल लेती है इसी प्रकार अनन्य प्रेमी भक्त भगवान् को

अपने शरीर और अंतःकरण से प्रथक् कर लेता है, प्रथम मनुष्य को कुसंग, कुकर्म , कुचिन्ता, कुमित्र, कुपुस्तक, कुभोजन तथा अभिमानादि दोषों को त्यागना चाहिये और शान्ति संतोषादि सद्गुणों को बढ़ाना चाहिये। विद्या का अभ्यास करना चाहिये, गुरु के आधीन होकर सदाचार का पालन करना चाहिये सदाचार यह है:- रात्रि के पिछले पहर में निद्रा से उठ कर परमेश्वर का स्मरण करे, गुरु का ध्यान करे, मानस पूजन करके ऋषियों को प्रणाम करे, एकांत स्थान में शौच से निवृत्त होकर दन्त धावन करके अरुणोदय के समय सवेरे ही स्नान करे, पीछे तर्पण करे और सूर्यको अर्घ्य देकर प्रातःसंध्या करे, बालों को काढ कर, तिलक लगा कर, होम करके स्वाध्याय करे । फिर स्वास्थ्य रक्षा के निमित्त व्यायाम करके न्याय पूर्वक धर्मानुसार धन उपार्जन का प्रयत्न करे । दोपहर को स्नान करके मध्याह्न संध्या करके श्रद्धा, भक्ति से यथाविधि इष्ट देवका पूजन करे। पितृयज्ञ, नरयज्ञ, भूतयज्ञ करके पुत्रादि के साथ यथा काल में पवित्र मन से यथायोग्य भोजन करे । फिर भक्ति युक्त मन से कुछ काल तक भगवत् का प्रसंग करके अपराह्न कृत्य करके कालानुसार स्नान, संध्या होमादिक सायंकाल की क्रिया करे। फिर भोजन के अंतमें परमेश्वर का ध्यान करके सो जाय ! योग्य काल पर जागे, प्रति दिन ऐसा ही किया करे ! धर्मोत्सव, पुण्य जनक व्रत तथा सब नित्य नैमित्तिक कार्य यथा शास्त्र किया करे ! तीर्थ यात्रा में जावे, संतसाधु सत्शास्त्रों का श्रद्धा पूर्वक सेवन करे। संतान और आश्रित बालकों को विद्याका अभ्यास करावे और शौचाचार सिखावे सर्वत्र शिव को देखे दान से और विश्व सेवा से स्वार्थ बुद्धित्याग दे ! परमात्मा में आस्था रक्खे, परमात्मा की प्रीति के अर्थ यथा शास्त्रयथा काल कर्तव्य कर्म करे । सर्वदा संयमी होकर कर्म फल ईश्वर को अर्पण करता हुआ आश्रम धर्म का पालन करे । अधिकार के अनुसार योगाभ्यास करे ! इस सब सदाचार के अनुष्ठान से ईश्वर में परम प्रेम उत्पन्न होता है और प्रेम से शीघ्र ही ईश्वर की प्राप्ति होती है, सारांश यह है कि ईश्वर परम प्रेम रूप है इसलिये परम प्रेम से ही ईश्वर की प्राप्ति होती है। सजातीय वस्तु ही सजातीय वस्तु में मिलती है। जैसे पानी पानी में मिलता है तैल तैल में मिलता है। दूध दूध में मिलता है घी घी में मिलता है इसी प्रकार परम प्रेम वाला भक्त ही परम प्रेम रूप ईश्वर को प्राप्त कर सक्ता है, बिना प्रेम के ईश्वर को प्राप्त होना असंभव है। प्रेम से जितनी जल्दी भगवत् प्रसन्न होते हैं, उतनी जल्दी अन्य उपाय से नहीं होते ! कहा भी है:-

विद्याजप संन्यास तप, यज्ञ दान दम नेम।
भगवान् कूं प्यारे नहीं, जैसा प्यारा प्रेम ॥
जैसा प्यारा प्रेम, प्रेम वश नर हरि आये।
दुष्ट दैत्य कूं मार, भक्त प्रह्लाद बचाये ॥
भोला! तज जग प्रेम, प्रेम जग पाश अविद्या।
कर हरि चरणन प्रेम प्रेम हरि ही है विद्या ॥

और भी कहा है:-

जोगी जंगम सेवड़ा, संन्यासी दुरवेश।
बिना प्रेम पहुंचे नहीं, दुर्गम हरि का देश ॥
दुर्गम हरिका देश, प्रेम बिनुपाय न कोई।
प्रेमी भक्त अनन्य, पाय अक्षय पद सोई ॥
भोला! मर मर जाय विषय विष भुंजक भोगी।
अचल अमर पद पाय, भक्त हरि प्रेमी योगी ॥

भगवदंक

आगामी विजया दशमी को भक्ति का विशेषांक भगवदंक, के रूप में प्रकाशित होगा। पृष्ठ संख्या १२५ से ऊपर होगी और सात आठ रंगीन चित्रों के अतिरिक्त कई सादे चित्र भी होंगे इतना होने पर भी हमने इसका मूल्य केवल।।।) मात्र रक्खा है। स्थायी ग्राहकों को तो यह २) में ही मिल जायगा अर्थात् उनको इसका अलग मूल्य नहीं देना पड़ेगा परन्तु उन लोगोंके लिये भी जोकि केवल भगवदंक ही लेना चाहें नफे का सौदा है। अंक लेखों और चित्रों की दृष्टि से उत्तम और सन्तोषप्रद होगा। देशके गण्यमान्य महात्माओं, भक्तों तथा विद्वानों से भगवद्विषयक भावपूर्ण लेख मंगाये गये हैं। जिस से यह अंक बहुत ही रुचिकर होने से संग्राह्य होगा। भक्ति का उद्देश्य जनता में भक्तिभाव को जाग्रत करना है, उसके लिए श्रद्धायुक्त निष्काम कर्म्म की आवश्यकता है, और भगवान् की दयासे वह माया भक्ति मण्डल में बढ़ रही है। भक्ति का भविष्य बड़ा उज्वल है कारण वर्तमान अशान्त संसार को भक्ति रस की आवश्यकता है और वह भगवान् की दया से संसार को प्राप्त होगा। भक्ति भाव के विकाश के साथ २ भक्ति का विकाश आप ही होगा। भक्ति अपना सन्देश अभी बहुत कम मनुष्यों को पहुंचा सकती है; इसकी ग्राहकसंख्या बहुत कम है। ग्राहक संख्या के कम होने का कारण यह नहीं है कि भक्ति २) रुपया में मंहगा पत्र है या इसमें लेख अच्छे नहीं होते। बल्कि इसका यह कारण है कि भक्ति जङ्गल में निवास करती है। उसका निवास जङ्गल में है और कार्यकर्त्ता अरण्यवासी हैं और वर्तमान समय में ग्रहस्थी लोग अरण्यवासियों के पास बहुत कम पहुंचते हैं जिससे लोग भक्ति को बहुत कम देख पाते हैं। साथ ही जङ्गल में धन भी नहीं होता और वर्तमान जगत् में धन की आवश्यता है। बिना धन के किसी सामग्री का उपलब्ध होना दुर्लभ है। भक्ति में काम करने वाले त्यागी हैं फिर भी अल्प ग्राहक संख्या होने के कारण बिना संरक्षकों और सहायकों की सहायता के भक्ति अपना खर्च नहीं चला सकती। हम चाहते हैं कि इस वर्ष भक्ति अपने पांव पर खड़ी होजाय और वह लगभग ४ हजार ग्राहक संख्या होने में आसानी से होसकती है। एक बार चार हजार ग्राहक संख्या होने पर भक्ति की पृष्ठ संख्या बढ़ाई जासकेगी और फिर भक्ति सब से सस्ता और उत्तम पत्र होजावेगा। हमारी अभिलाषा है कि हमारे गरीब भाई व बहनें जो निर्धनता के कारण न तो तीर्थयात्रा कर सकते हैं औरन अन्य ग्रन्थोंको खरीद करही पढ़सकते हैं उनको सस्ते दामों भक्ति पढ़ने को मिले ताकि वह भक्ति और ज्ञान से अपने आत्मा को शान्त कर सकें और यह तब ही हो सकता है जब कि भक्ति की ग्राहक संख्या बढ़ कर वह अपने पांव पर खड़ी होजावे। यह काम कठिन नहीं है केवल भक्तिके पाठकों के ध्यान देने की बात है और उसके लिए भक्ति के पाठकों से हमारा निवेदन है कि वह आगामी वर्ष के लिए भक्ति को अपना कर केवल एक २ ग्राहक और बना देवें।

ग्राहकों के प्रति

१. पिछले वर्ष निर्धन विद्यार्थियों को ।।) में वर्ष भर तक भक्ति देने की सूचना निकाली थी। उसके अनुसार जिन जिन विद्यार्थियों ने भक्ति मांगी

उनके पास भेजी भी गई। इस बार इस प्रकार की रियायत करने के लिये कार्यालय समर्थ नहीं है। अतः जिन विद्यार्थियों के पास ॥) में भक्ति जाती है उनके पास अबकी बार चौथे वर्ष का भगवदंक २=) को वी. पी. द्वारा भेजा जायगा। जिन विद्यार्थियोंको वी. पी. लेना इष्ट न हो वह कृपया पत्र डाल कर कार्यालय को सूचित कर दें। जिस से कार्यालय को वृथा हानि न उठानी पड़े।

२. जिन ग्राहकों का चन्दा इस अंक के पहुंचने पर समाप्त हो गया है वह कृपया अपना चन्दा मनिआर्डर द्वारा भेजदें। कारण कि पहिले अंक पर वी. पी. अधिक करनी पड़ेंगी जिस से उनके पास विशेषांक देरमें पहुंचने की सम्भावना है। मनीआर्डर भेजने से समय पर पहुंच जायगा।

३. जिन ग्राहकों का चन्दा समाप्त नहीं हुवा है वह यदि =) की टिकटें भेजदें तो उनके पास "भगवदंक" रजिष्टरी से भेज दिया जायगा। इस प्रकार उनको 'भगवदंक' के खोनेका भय नहीं रहेगा। परन्तु टिकट भेजते समय ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें अन्यथा "भगवदंक" प्रायः रजिष्ट्री से नहीं भेजा जायगा।

४. बहुत से प्रेमी ग्राहक पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर नहीं लिखते। इससे कार्य कर्ताओं को बड़ी अड़चन रहती है। कृपा करके पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें अन्यथा उनकी चिट्ठी पर प्रायः कुछ ध्यान नहीं दिया जायगा।

भजन

जब गज अर्ध नाम गुहरायो।
जब लगि आवे दूसर अच्छर,
तब लगि आपु ही धायो।
पाय पियादे भे करुणामय,
गरुड़ासन बिसरायो।
धाय गजंद गोद प्रभु लीन्हो,
बिमल सुजस जग छायो॥ २॥
मीरा को बिष अमृत कीन्हो,
आपनि भक्ति दिखायो।
नामदेव हित कारण प्रभु तुम,
मितंक गाय जिमायो॥ ३॥
भक्त हेत तुम जुग २ जन्मेउ,
तुमहिं सदा यह भायो।
बलि बलि दूलन दास नामकी,
नामहि ते चित लायो॥ ४॥

२

प्रभु जी बरषा प्रेम निहारो।
ऊठत बैठत छिन नहिं बीतत, या हो रीति तुम्हारो॥
समय होय भा असमय होवै, भरन न लागत बारो॥
जैसे प्रीति किसान खेती सों, तैसो है जन प्यारो॥२॥
भक्त बछल है बान तिहारो, गुन औगुन न बिचारो॥
जह २ जावं नाम गुन गावत, जम को सोच निवारो॥
सोवत जागत सरन धरम यह, पुलकित मनहिं बिचारो
कह गुलाब तुम ऐसो साहिब, देखत न्यारो न्यारो॥

३

उलटि देखो घट में जोति पसार।
बिन बाजे तहं धुनि सब होवे,
बिगसि कमल कचनार॥ १॥

बैठि पताल सूर शसि बांधो,
साधो त्रिकुटी द्वार ।
गंग जमन के वार पार बिच,
भरत है अमिय करार ॥ २ ॥
इंगला पिंगला सुखमन सोधो,
बहत सिखर-मुखधार ।
सुरति निरति ले बैठु गगन पर,
सहज उठैं भनकार ॥ ३ ॥
सोहं डोरी मूल ताहि बांधो-
मानिक बरत लिलार ।
कह गुलाल सतगुरु बर पायो,
भरो है मुक्ति भंडार ॥ ४ ॥

४

प्रेम प्रीति के बेर लछमन खाने दे ॥ टेक ॥

माता महलों में भोजन बनाती,
और प्रेम से हमें जिमाती ।
वह भिलनी सकल भुलाती, जो माता बुलाती टेर ॥ १ ॥
इन कुटिया खूब सजाई और वेदी देख बनाई,
नित करती हवन मेरे भाई, इसे नीचों में मत गेर ॥ २
गुणी तो गुण को जाने, और चाम चमार पिछाने ।
गुणी मेरे मन माने, मेरे नहीं अन्धेर ॥ ३ ॥
यह कितना प्रेम बढ़ावे, चरणों में लिपटी आवे !
बस प्रेम मेरे मन भावे, अब केवल तज मद अन्धेर ॥ ४

५

हमारे मन बस गये सीताराम ॥ टेक ॥

तनमें मनमें रोम रोम में, हाड़ मांस अरु चाम ॥ १ ॥
होहुँन एक पलक दृग ओटन, कौशलेश सुख धाम ॥ २॥
श्रद्धा और कछु नहीं मोको, एक जपें तव नाम ॥ ३ ॥
और नाम से काम न राखो, राम नाम से काम ॥ ४ ॥
राम प्रताप भक्ति के कारण, सेवत चरण ललाम ॥ ५ ॥

६

शोभित कर नव नीत लिये ॥ टेक ॥

घुटरन चलत रेणु तन मंडित, मुख दधि लेप किये ॥ १ ॥
चारु कपोल लोल लोचन हैं, गो रोचन तिलक दिये ॥ २
लट लटकन मन मत्त मधुप गण, मादक मधुहि पिये ॥ ३
कठुला कंठ वज्र केहरि नख, राजत रुचिर हिये ॥ ४ ॥
धन्य सूर एको पल यह सुख, का शत कल्प जिये ॥ ५ ॥

७

नन्द नन्दन वृन्दावन चन्द ॥ टेक ॥

यह कहि जननी जगावति लालन, जागो मोरे आनंद कंद ।१
आलस भरे उठे मन मोहन, चलत चाल ठुमकत अति मंद ॥
पोंछे वदन अञ्चल सों यशुमति, उर लगाय उपजो आनन्द ॥

८

अरे मन तू न भयो अपना ॥ टेक ॥

दौलत दुनियां माल खजाना, यह जग है स्वपना ॥ १ ॥
प्राण पुरुष जब निकसन लागे, मुख पर दियो ढपना ॥ २ ॥
चार जना मिल लै चले हैं, और त्यार तपना ॥ ३ ॥
तुलसीदास जग सार यही है राम नाम जपना ॥ ४ ॥

भक्ति के तृतीय वर्ष की विषय सूची

	लेख	लेखक	पृष्ठ
१.	अमूल्य पदार्थ	[ले० श्री० जयदयाल जी डालमियां	२५४
२.	अभिलाषा (कविता)	[,, ,, मदनगोपाल जी सिंहल	३१६
३.	अनुनय (कविता)	[,, ,, पं० रमाशंकर जी मिश्र "आंपति"	३४१
४.	अहेतुकी भक्ति	[,, एक जिज्ञासु	३४४
५.	अनन्त कथायें	[,, ,, पं० अनन्तराम जी योगाचार्य	३९०
६.	आप भला तो जग भला	[,, ,, स्वामी भोले बाबा जी अनुपशहर	१०
७.	आह्वान	[,, ,, ,, आनन्द भिक्षु जी सरस्वती	५७
८.	आत्मोद्धार के लिये चेतावनी	[,, ,, पूज्य जयदयाल जी गोयन्दका	९५
९.	आओ (कविता)	[,, ,, मदनगोपाल जी सिंहल	३७७
१०.	आत्महित चिन्ता	[,, ,, पं० गंगाप्रसाद जी अग्निहोत्री	४१६
११.	उपदेशामृत	[,, ,, स्वामी भोले बाबा जी	३६०
१२.	,,	[,, ,, ,, ,,	३८९
१३.	उच्च उद्गार (कविता)	[,, ,, शोभाराम जी धेनुसेवक	२१५
१४.	कलि सन्तरणोपाय	[,, ,, प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी	२२१
१५.	कच की गुरु भक्ति	[,, ,, भूमानन्द जी ,,	२५१
१६.	कर सकते हो पार तुम्हीं (कविता)	[,, ,, मुरारी शर्मा "अभय"	२५४
१७.	कहते हैं (कविता)	[,, ,, पं० गंगाविष्णु जी विद्याभूषण	३७२
१८.	कुछ नहीं	[,, ,, पं० आनन्दीप्रसादजी मिश्र 'निर्द्वन्द्व'	१७६
१९.	कृष्ण (कविता)	[,, ,, पं० गंगाप्रसाद जी पाण्डेय	४४२
२०.	खोज	[,, ,, हरीकृष्णदास जी गुप्त दिल्ली	१८४
२१.	गुरु महिमा (कविता)	[,, ,, मुरारी शर्मा 'अभय'	७
२२.	गुरु कृपा से भगवद्दर्शन	[,, ,, पं० रघुनाथ जी शर्मा	३६
२३.	गुरु के प्रति	[,, ,, मुरारी शर्मा 'अभय'	७१
२४.	गीता सुन कर अर्जुन ने क्या किया	[,, ,, पं० गंगाप्रसाद जी अग्निहोत्री	१७२
२५.	गोवंश के उपकार	[,, ,, ,, ,,	२८६
२६.	गोरक्षा के प्रश्न की व्यापकता	[,, ,, ,, ,,	३४६

२७.	गुरु वन्दना (कविता)	[से० बी० प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी आश्रम	३८१
२८.	गीता प्रेमी विद्वानों से निवेदन	[,, ,, बाबूराम जी शुक्ल	४५९
२९.	ग्राहकों के प्रति	[,, ,, सम्पादक महोदय	४५३
३०.	चोर	[,, ,, मदनगोपाल जी सिंहल	४५३
३१.	जय शंकार (कविता)	[,, ,, सुमित्रादेवी जी	१६३
३२.	जिज्ञासु कर्तव्य	[,, ,, महात्मा राम	१६४
३३.	जिज्ञासु कर्तव्य	[,, ,, ,, ,,	२२५
३४.	जिज्ञासा	[,, ,, ,, ,,	३४१
३५.	जस कथनी तस चाहिय नाचा	[,, ,, पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी	३०३
३६.	जगत् प्रवाह	[,, ,, ,, ,,	४४४
३७.	तुम कहां हो ?	[,, ,, भट्ट रामशंकर मोहन जी	५५९
३८.	तू और मैं	[,, ,, प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी मुसी	३१५
३९.	तीन मार्ग	[,, ,, मधुमंगल जी मिश्र बी० ए०	४४७
४०.	देव के प्रति (कविता)	[,, ,, मुरारी शर्मा "अनघ"	५३
४१.	देव हरि मुस्काने	[,, ,, ब्रजकुमारीदेवी जी	२१८
४२.	दम	[,, ,, हरिओं ब्रह्मचारी जी	२१५
४३.	दान	[,, ,, सूरजदेवी जी	२५६
४४.	देखा (कविता)	[,, ,, मदनगोपाल जी सिंहल	२६१
४५.	ध्रुव भक्त चरित्र	[,, ,, सूरजदेवी जी	८४
४६.	नूतन वर्ष का उपहार	[,, ,, सम्पादक	४
४७.	नाम महात्म्य	[,, ,, नवलकिशोर जी ब्रह्मचारी	७७
४८.	निष्काम भक्ति	[,, ,, सावित्रीदेवी जी	२८९
४९.	नन्द-कुमार (कविता)	[,, ,, मदनगोपाल जी सिंहल	३४७
५०.	निराश की आशा	[,, ,, हरिकृष्णदास जी गुप्ता	४४०
५१.	परपीड़ा हरण की अभिलाषा	[,, ,, सेठ जमनालाल जी बजाज	३
५२.	प्रेम रसज्ञ गोपिकायें	[,, ,, ...	७
५३.	प्रार्थना (कविता)	[,, ,, दुर्गाप्रसाद जी गुप्त	४२
५४.	पागलपन	[,, ,, छेदीलाल जी ,,	६८
५५.	परम भक्त प्रह्लाद जी	[,, ,, भूमानन्द जी ब्रह्मचारी	७१
५६.	प्रेम की अद्भुत शक्ति	[,, ,, ...	४२९

५७.	प्रेम भीख ही भर देना (कविता)	[ले० श्री०	व्रजकुमारी	९०
५८.	प्रेम	[,, ,,	व्रजकुमारी	१५९
५९.	प्रार्थना	[,, ,,	... ...	१७२
६०.	प्रीति (कविता)	[,, ,,	व्रजकुमारी	१९०
६१.	प्रार्थना (कविता)	[,, ,,	... ...	२०५
६२.	पुकार	[,, ,,	हरिकृष्ण दासजी गुप्त	२१९
६३.	परोक्ष गोवध के दोषी कौन २ हैं	[,, ,,	पं० गंगाप्रसाद जी अग्निहोत्री	२५९
६४.	पुण्य स्मृति (कविता)	[,, ,,	रमाशंकर जी मिश्र	२७२
६५.	पावन प्रतिमा (कविता)	[,, ,,	सुमित्रादेवी	३२४
६६.	प्रेमा भक्ति	[,, ,,	पं० अनन्तरामजी योगाचार्य	३२७
६७.	२	[,, ,,	,, ,, ,,	३५८
६८.	पत्र पुष्प	[,, ,,	,, ,, ,,	३८१
६९.	प्रेम विचरण	[,, ,,	स्वामी भोले बाबा जी	४५१
७०.	वसन्त	[,, ,,	सम्पादक	२६१
७१.	भक्तों के लक्षण	[,, ,,	महात्मा राम	२२
७२.	भक्ति का विकाश	[,, ,,	वदामोदेवी	३९
७३.	भक्ति मार्ग	[,, ,,	भाई परमानन्द जी	४२
७४.	भगवद्भक्तों पर भगवान् का अनुग्रह	[,, ,,	भोले बाबाजी	४३
७५.	भगवद्भक्त गोभक्त	[,, ,,	पं० गंगाप्रसाद जी अग्निहोत्री	६१
७६.	भगवद्भक्त रसखान	[,, ,,	क्षमादेवी	८२
७७.	भक्त हरदास जी	[,, ,,	सम्पादक	९३
७८.	भजन			९९
७९.	,,			१३५
८०.	,,			१६४
८१.	,,			२००
८२.	,,			२३१
८३.	,,			२६३
८४.	,,			२६६
८५.	,,			३२९
८६.	,,			३६१

८७.	भजन	[ले० श्री०		३९३
८८.	,,	[,, ,,		४२६
८९.	भक्ति में शक्ति	[,, ,,	आनन्दीप्रसाद जी मिश्र "सिद्धेन्द्र"	१२०
९०.	भक्तिमहारानी	[,, ,,	भोलेबाबा जी	२२३
९१.	भगवद्भक्ति	[,, ,,	,, ,,	२४३
९२.	,,	[,, ,,	,, ,,	२९३
९३.	,,	[,, ,,	,, ,,	२०६
९४.	,,	[,, ,,	,, ,,	२४१
९५.	,,	[,, ,,	,, ,,	२०३
९६.	,,	[,, ,,	,, ,,	३०७
९७.	,,	[,, ,,	,, ,,	३३३
९८.	,,	[,, ,,	,, ,,	३६७
९९.	,,	[,, ,,	,, ,,	४००
१००.	,,	[,, ,,	,, ,,	४३१
१०१.	भक्ति	,, ,,	पं० रघुनाथ स्वामी	१५६
१०२.	भगवद्वचन	...	...	१६९
१०३.	,,	...	...	२०१
१०४.	,,	...	...	२३३
१०५.	,,	...	...	२६५
१०६.	,,	...	...	२९९
१०७.	,,	...	...	३३१
१०८.	भगवद्भक्ति किस प्रकार करनी चाहिये	[,, ,,	पूज्य भोले बाबा जी	२०७
१०९.	भक्तों के चरित्र	[,, ,,	सम्पादक	२०३
११०.	,,	[,, ,,	,,	२३५
१११.	भक्ति मार्ग	[,, ,,	मनोरमा देवी	२२८
११२.	भक्ति के रास्ते क्या हैं	[,, ,,	पं० घासीराम शर्मा दिल्ली	२३८
११३.	भक्तकी भावना (कविता)	[ले० श्री०	शोभाराम धेनुसेवक	२८१
११४.	भगवद्भक्त राजा उपरिचर	[,, ,,	सम्पादक	२८४
११५.	भगवद्भक्ति	[,, ,,	पं० शेषाधर जी पाण्डेय	३९१
११६.	भक्त को दुःख नहीं होता	...	... ...	३९०

११६.	भक्ति भेंट	[ले० श्री०	हरिकृष्ण दासजी गुप्ता	४१०
११७.	भक्ति ही सर्वोपरि है	[,, ,,	स्वामी आत्मानन्द जी	४१८
११८.	भगवदंक	[,, ,,	सम्पादक	४५७
११९.	मंगलाचरण	...	...	१
१२०.	,,	...	...	१०५
१२१.	,,	...	...	१३७
१२२.	मनुष्य का कर्तव्य	[,, ,,	सम्पादक	५
१२३.	महात्माओं के वाक्य	[,, ,,	,,	२४०
१२४.	मिलन	[,, ,,	हरिकृष्णदास जी गुप्त	२४८
१२५.	मोहन के प्रति (कविता)	[,, ,,	श्रीराम "राम"	२५१
१२६.	मीरा गुण गान (कविता)	[,, ,,	हरिकृष्णदास जी गुप्त	२९५
१२७.	महात्मा सच्चिदानन्द का उपदेश	[,, ,,	भक्त शिरोमणी श्री मथुराप्रसादजी	३८६
१२८.	,, ,,	[,, ,,	,,	४०६
१२९.	मधुरी तान (कविता)	[,, ,,	दुर्गाप्रसाद जी गुप्त	७०
१३०.	यमदूत बाणों (कविता)	[,, ,,	भोले बाबाजी	६३
१३१.	राम नाम महिमा	[,, ,,	पूज्य मदन मोहन जी मालवीय	९
१३२.	रजकोद्धार	...	... ...	३६५
१३३.	लगाओ पार (कविता)	[,, ,,	पं० रमाशंकर जी मिश्र "श्रीपति"	३६७
१३४.	लक्ष्मी पूजन	[,, ,,	भोले बाबा जी अनूपशहर	१०८
१३५.	वरदेवी हे प्रेममयी (कविता)	[,, ,,	सुमित्रादेवी	६०
१३६.	विदा कविता	[,, ,,	भोले बाबाजी अनूपशहर	१३४
१३७.	वेद सूर्योदयः (कविता)	[,, ,,	पं० मेवाव्रत जी	१३६
१३८.	विचित्र लीला (कविता)	[,, ,,	मेलाराम जी वैश्य	३०६
१३९.	वह छवि	[,, ,,	आनन्दी प्रसाद मिश्र "निर्द्वन्द्व"	२१७
१४०.	वाक्य सुधा	[,, ,,	सीताराम जी शास्त्री	४३९
१४१.	श्रीरामकृष्णजी परमहंस	[,, ,,	जयदेव जी डालमियां	२९
१४२.	श्रीकृष्ण से दो दो बातें	[,, ,,	वैष्णव श्री देवदास देव	५६
१४३.	श्रीकृष्ण चरित्र	[,, ,,	सम्पादक	१०७
१४४.	,,	[,, ,,	,,	१३९
१४५.	,,	[,, ,,	,,	१८७

१४६.	श्रीमद्भगवद्गीता (कविता)	[डॉ० श्री० महादेव सरस्वती	१५४
१४७.	"	[" "	१९१
१४८.	"	[" "	२२४
१४९.	श्याम प्यारे से खरी खरी बातें	[" " एक जिज्ञासु	११७
१५०.	श्रीचैतन्य महाप्रभु	... ...	२६७
१५१	"	... ...	३०१
१५२	श्रद्धा अन्धी है या सूझती	[" " भोले बाबा	२९०
१५३.	श्रीकृष्णाराधन से मनुष्य जन्म की सफलता	[" " आचार्य मदन मोहन जी गोस्वामी	३१९
१५४.	शुभाशुभ फल निरूपण	... ...	३५२
१५५.	श्रेयो निरूपण	[" " सम्पादक	३३६
१५६.	शिव स्तुति	... ...	३६३
१५७.	श्रीरामनाम महिमा	[" " गंगानाथ जी उपाध्याय	३०७
१५८.	"	[" "	४४१
१५९.	श्याम कब आयेंगे (कविता)	[" " गंगाविष्णु पाण्डेय	४००
१६०.	श्याम वंदना (कविता)	[" " वैकुण्ठ प्रसाद वर्मा	४४५
१६०.	शरण	[" " मदन गोपालजी सिंहल	४११
१६१.	श्रीकृष्ण जयन्ती	[" " भक्त शिरोमणी मथुराप्रसाद जी	४५०
१६२.	सत्य का स्वरूप	[" " सम्पादक	२८२
१६४.	सुखी कौन है	[" " महात्मा राम	३८२
१६५.	साकार या निराकार	[" " जयराम "सनातन"	१२३
१६६.	सूरदास जी	[" " शकुन्तलादेवी "सुरी"	५१
१६७	साधु तुकाराम	[" " प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी आश्रम	९७
१६८	हितोपदेश	[" " भोले बाबा	३१८
१६९.	हरिजन मरते समय भी आनन्दित रह सकते है	[" " वैद्य अमृतलाल सुन्दरजी पढ़ियार	३२१
१७०.	हिन्दी कवियों की भगवद्भक्ति	[" " ब्रह्म शास्त्री	३२५
१७१.	हरिहरात्मक स्तोत्र	सम्पादक	३३६
१७२.	"	[" " "	४२७
१७३.	हनुमान का भीम को उपदेश	[" " सूरज देवी	१५०
१७४.	हथपट्टा	[" " गुरदेवशरण	२५
१७५.	हम चाहते नहीं	[" " हनुमान प्रसादजी पोद्दार सं० कल्याण	५४
१७६.	हरि स्मरण (कविता)	[" " एक महात्मा	२१३
२०७.	क्षमा प्रार्थना	[" " सम्पादक	१०३

मुद्रक तथा प्रकाशक भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" आश्रम, रेवाड़ी।

भक्ति के संरक्षक

भक्त नन्दकिशोर जी चर्खी दादरी	१११)
ले० क० सरदार रघुबीरसिंह जी सांधोवालिया राजा सांसी, अमृतसर	१११)
ला० नूनकरणदास जी अग्रवाल भिवानी।	१०१
आनरेबिल सरदार जुगेन्द्रसिंह जी मिनिस्टर आफ ऐग्रीकलचर लाहोर	,,
राव बहादुर, कप्तान राव बलवीर सिंह जी ओ. बी. ई. रामपुरा	५१)
सेठ अर्जुनदास जी भटिण्डा	५१)
राव श्रीराम जी रईस नांगल	२५)
म० शोभाराम जी डूंगरवास	,,
बाई लक्ष्मादेवी भगनी राव जगमालसिंहजी रईस नांगल	,,
श्रीमती रानी निहालकोर धर्मपत्नी कप्तान राव बहादुर बलवीरसिंह जी	,,
सेठ बनवारी लाल जी लोहिया चावड़ी बाजार दिल्ली	,,
ठाकुर उमरावसिंह जी रईस नान्धा	,,
ला० दुर्गाप्रसाद जी भार्गव कुतबपुर	,,
राय बहादुर सरदार शोभासिंह जी आनरेरी मजिस्ट्रेट नई दिल्ली	,,
बाई बदामो देवी पुत्री ला० गनेशीलाल चर्खीदादरी	,,
श्रीमती भक्काणीदेवी धर्मपत्नी भक्त नन्दकिशोर जी चर्खीदादरी	,,
श्रीमती गोदावरीदेवी भगनी ला० प्रभुदयाल जी ,,	,,
श्री० गणपतिदेवी धर्मपत्नी ला० गंगाप्रसाद जी दादरीवाले, साहबगंज	२५)
सेठ उमरावसिंह जी डालमियां चिड़ावा	५१)
मक्खी चण्डूमल बलीराम जी भटण्डा	५१)
सर आपा राव सातोले साहिब सी० एस० ई० के० बी० ई० रेवेन्य मेम्बर गवालियर	५१)
राव गजराजसिंह जी बी० ए० एल० एल० बी० गुड़गावां	२५)
सेठ नागरमल जी सेखासरिया आनरेरी मजिस्ट्रेट मिचनाबाद	२५)
प्रेमसुख हीरालाल जनरल ठेकेदार रेवाड़ी	२५)
ला० जोहरी मलजी रेवाड़ी	५१)
एस० जे० राव पंवार होम मेम्बर गवालियर स्टेट ,,	२५)
राय बहादुर सरदार बसावासिंह जी नई दिल्ली	२५)
पी० एन० कोल बैरिस्टर दिवान भूतपूर्व देवास स्टेट लाहोर	२५)
चौ० जीवनदास जी आनरेरी मजिस्ट्रेट झंङ्ग	२५)
सूबेदार जगरामसिंह जी कोसली	२५)

REGD. No. L. 2077

भक्ति प्रेस में मिलने वाली पुस्तकें।

१.	भगवत्गीता संस्कृत तथा भाषा टीका सहित	मूल्य	॥≈)
२.	भगवत् गीता दशम अध्याय पर्यन्त ...	,,	।=)
३.	वेदोपनिषत्	,,	।=)
४.	अष्टोत्तरशतमन्त्रमाला	,,	=)।
५.	ज्ञानधर्मोपदेश	,,	=)।।।
६.	भक्ति योग संग्रह	,,	≈)।।
७.	शब्द सदाचार संग्रह	,,	=)।
८.	सत्य शब्द संग्रह	,,	।≈)
९.	शब्दसंग्रह	,,	=)।।
१०.	सारसंग्रह	,,	≈)
११.	भाषा फक्किका प्रकाश	,,	।)

मिलने का पताः—

श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

केवल टाइटिल पेज महारथी प्रेस, दिल्ली में छपा।